ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वर्ष 56 अंक : 4 फरवरी 2010 मूल्य : 10 रुपये

स्वस्थ गांव खुशहाल देश

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम–1857

प्रकाशन विभाग की चुनिंदा पुस्तकें

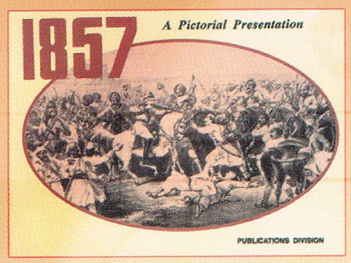

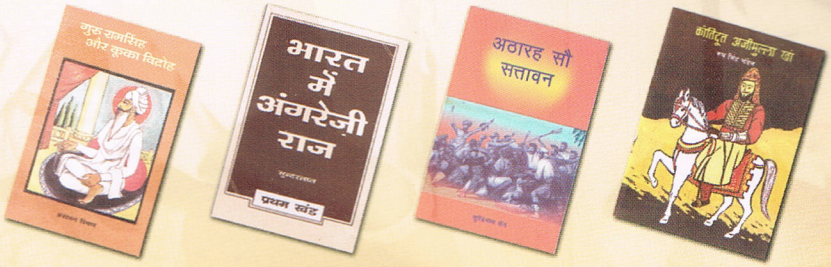

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली

विक्रय केंद्रः सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, **नई दिल्ली (24365610)** हाल नं0 196, पुराना सचिवालय, **दिल्ली** (23890205) सी–701, केंद्रीय सदन, बेलापुर, **नवी मुंबई** (27570686) 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, **कोलकाता** (22488030) राजाजी भवन, एफ एंड जी ब्लॉक, 'ए' विंग बेसेंट नगर, **चेन्नई** (24917673) बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, **पटना** (2683407) प्रेस रोड, निकट गवर्मेंट प्रेस **तिरुअनंतपुरम** (2330650) हाल नं.1, दूसरी मंजिल, केंद्रीय भवन, सेक्टर–एच, अलीगंज, **लखनऊ** (2325455) ब्लॉक नं. 4, गृहकल्प कॉम्प्लेक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, **हैदराबाद** (24605383) प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, **बंगलौर** (25537244) अम्बिका कॉम्प्लेक्स, प्रथम तल, पालदी, **अहमदाबाद** (26588669) हाउस नं. 07, न्यू कालोनी, चेनीकुथी, के.के.बी. रोड, **गुवाहाटी** (2885090)

ज्यादा जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट देखें – www.publicationsdivision.nic.in
e-mail:dpd@sb.nic.in, dpd@hub.nic.in

DPDB-H-09/9

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

कुरुक्षेत्र

वर्ष : 56 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48, माघ–फाल्गुन 1931, फरवरी 2010

प्रधान संपादक
नीता प्रसाद

वरिष्ठ सम्पादक
कैलाश चन्द मीना

सम्पादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक,
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110 011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक
जे.के. चन्द्रा

व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के बदलते आयाम	उमर फारूकी	3
गांवों में वैकल्पिक चिकित्सा व्यवस्था	डॉ. मीनाक्षी शर्मा	8
यूं बदला राजस्थान के गांवों का स्वास्थ्य	संगीता यादव	13
एड्स एक विश्वव्यापी समस्या : बचाव ही एकमात्र निदान	डॉ. नीरज कुमार गौतम	19
औषधीय गुणों से परिपूर्ण शहद	डॉ. हरेन्द्र राज गौतम	23
मधुमेह रोगियों के लिए वरदान : चीनी तुलसी	विनोद कुमार यादव	26
पुष्पकृषि : अवसरों का रंगीला गुलदस्ता	आर.बी.एल. गर्ग	30
बीपीएल परिवारों के युवा बने पहरेदार : नौकरी मिलते ही आई खुशहाली	रामचरण धाकड़	34
जीरो टिलेज तकनीक से गेहूं उत्पादन	एच.एस. भदौरिया	37
विटामिन सी से भरपूर आंवला	डॉ. सुनील कुमार खण्डेलवाल	41
जल संरक्षण की अलख जगाती एक ग्रामीण महिला	रजनी मिश्रा	46

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय

स्वास्थ्य मानव जीवन की एक अनमोल संपत्ति है। मनुष्य के जीवन और उसकी खुशी के लिए स्वास्थ्य से ज्यादा महत्वपूर्ण किसी अन्य वस्तु की कल्पना करना कठिन है। स्वास्थ्य किसी भी समाज की आर्थिक प्रगति के लिए अनिवार्य है। जो भी व्यक्ति अथवा समाज स्वास्थ्य की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह न केवल संपन्नता की दृष्टि से पिछड़ जाएगा बल्कि ऐसे समाज में जीवन मूल्यों की स्थापना करना भी बेहद कठिन है चूंकि अच्छे स्वास्थ्य के अभाव में व्यक्ति और व्यक्तियों से निर्मित समाज अपने गुणों के अनुरूप सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। मानव जीवन में स्वास्थ्य के इसी महत्व को स्वीकारते हुए इसे राज्य सूची में शामिल किया गया है। यहां राज्य का यह दायित्व है कि सार्वभौम स्वास्थ्य सेवाओं तक सबकी पहुंच हो तथा भुगतान असामर्थ्यता की वजह से किसी को भी स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित न होना पड़े।

आजादी से पहले देश के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिवर्ष संक्रामक रोगों से करीब 13 लाख लोग काल –कवलित हो जाते थे। आजाद भारत में गांवों के स्वास्थ्य परिदृश्य में काफी सुधार हुआ है हालांकि अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना बाकी है। इसमें कोई शक नहीं है कि पहले गांवों में निरक्षरता और अंधविश्वास के चलते बहुत लोग मौत के मुंह में समा जाते थे लेकिन अब स्थिति पहले जैसी नहीं है। गांवों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार से ग्रामीण लोगों में अंधविश्वास कम हुए हैं। सरकारी योजनाओं के प्रचार–प्रसार का भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

आज चिंता का विषय केवल स्वास्थ्य सुविधाओं की अनुपलब्धता नहीं है बल्कि हर दिन पनप रहे नए–नए रोग भी परेशानी का सबब बन रहे हैं। रोगोपचार की अनेक प्रचलित विधियों तथा एलोपैथी चिकित्सा पद्धति के निरंतर विकास के बावजूद बढ़ते जा रहे रोगों पर नियंत्रण नहीं हो पा रहा है। एड्स का प्रकोप अभी कम हुआ नहीं था कि स्वाइन फ्लू बीमारी ने विश्वभर में अपने पैर पसार लिए हैं। दूसरी तरफ कैंसर, मलेरिया, मधुमेह, हृदयरोग, रक्तचाप जैसी बीमारियों के उपचार में सुगमता अवश्य आई है लेकिन महंगी दवाओं व टेस्ट के चलते ग्रामीण जन की क्षमता के बाहर हैं। हालांकि 'डाट्स' जैसे कार्यक्रम के जरिए घर के दरवाजे पर रोगी को दवा खिलाने का कार्य डाक्टर कर रहे हैं फिर भी रोकथाम पूरी तरह नहीं हो पा रही है।

आज समय का तकाजा यह है कि हम स्वास्थ्य सुविधाओं के प्रचार–प्रसार के साथ–साथ रोगों की बढ़ोतरी पर नियंत्रण के वैकल्पिक उपायों पर भी विचार करें। इसी के चलते सरकार पारम्परिक उपचार पद्धतियों – जैसे योग, प्राकृतिक चिकित्सा, आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी के प्रयोग पर विशेष जोर दे रही है। यह कार्य राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत किया जा रहा है।

स्वस्थ तन में ही स्वस्थ मन का निवास होता है। इसीलिए आज जरूरत इस बात की है कि हम सभी अपने स्वास्थ्य के प्रति स्वयं जागरुक हो। केवल सरकार से ही सारी उम्मीदें लगाना सही नहीं है। बाहरी बीमारियों से बचाव की ढांचागत सुविधाएं उपलब्ध कराना यदि सरकार का कर्तव्य है तो उन सुविधाओं का उचित प्रयोग तथा रखरखाव हर नागरिक का परम कर्तव्य है । निरंतर स्वस्थ रहने के लिए एक मजबूत प्रतिरक्षा प्रणाली का होना जरूरी है जिसके लिए हमें अपनी जीवनशैली में सुधार कर नियमित व्यायाम और संतुलित खानपान को अपनी दिनचर्या का हिस्सा बनाना होगा। हमें साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए। तनावरहित दिनचर्या, सृजनात्मक सकियता, समुचित भोजन और पर्याप्त व्यायाम हमारे जीवन को स्वस्थ और सुखद बनाने में अहम भूमिका निभाते हैं।

ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के बदलते आयाम

उमर फारूकी

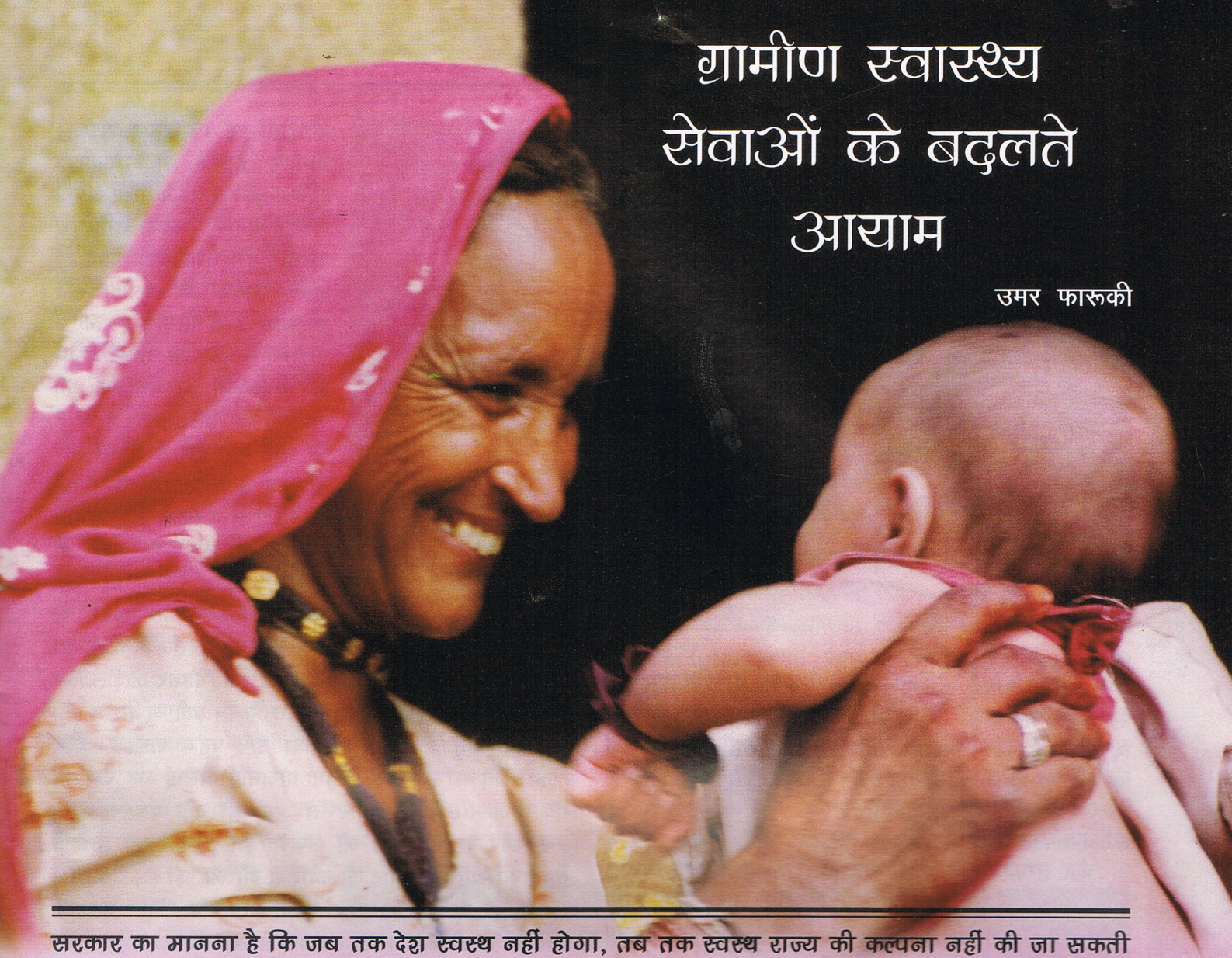

सरकार का मानना है कि जब तक देश स्वस्थ नहीं होगा, तब तक स्वस्थ राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती है। केंद्रीय चिकित्सा मंत्री ने भी इस बात को दोहराया था कि राज्य सरकारें ग्रामीण इलाके में चिकित्सा सुविधा के विस्तार के लिए अपनी जरूरतें बताएं, सरकार उन्हें पूरा करेगी। इस तरह देखा जाए तो राज्य सरकार के अलावा केंद्र की ओर से भी ग्रामीण इलाके में स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए लगातार कोशिश की जा रही है। आजादी के समय जीवन प्रत्याशा 32 वर्ष थी, जो अब करीब 66 वर्ष से अधिक तक पहुंच चुकी है। पहले चेचक, प्लेग, मलेरिया सहित अन्य बीमारियों से लाखों लोग दम तोड़ देते थे, इन महामारियों के अलावा हम पोलियो को भी दूर भगाने में सफल रहे हैं। स्वास्थ्य विभाग के आंकड़े यह साबित करते हैं कि पहले जहां अकेले एक गांव में सैंकड़ों लोग मरते थे वहीं अब मलेरिया से करीब 20 लाख की आबादी में एक या दो लोगों की मौत होती है। फिर भी अभी हमें बहुत कुछ करना है, जिसके लिए हमारी केंद्र एवं राज्य सरकारें तत्पर हैं।

देश की आजादी के बाद हम लगातार विकास के पथ पर अग्रसर हैं। हम विकासशील से विकसित देश होने जा रहे हैं। हमने चिकित्सा, शिक्षा सहित हर क्षेत्र में तेजी से विकास किया है। चूंकि भारत एक ऐसा देश है, जहां की 73 फीसदी से अधिक आबादी गांवों में रहती है। लेकिन अभी तक गांवों में शहरों की अपेक्षा सिर्फ 15 फीसदी ही स्वास्थ्य सेवा पहुंच पाई हैं। इन सुविधाओं को बढ़ाने के लिए हमारी केंद्र सरकार हो या राज्य सरकार सभी का ध्यान गांवों की ओर है। जब तक विकास योजनाओं की पहुंच गांवों तक नहीं होगी तब तक देश व समाज का भला नहीं हो सकता है। विश्व की कुल आबादी का 16.5

प्रतिशत भारत में है, लेकिन दुनिया की 20 फीसदी बीमारियां अकेले भारत में रहती हैं। दुनिया के श्वास संबंधी और कुपोषण संबंधी 20 फीसदी मरीज भारत में रहते हैं। ऐसे में यहां के लोगों की स्वास्थ्य सुरक्षा का समुचित प्रबंध होना भी एक बड़ी चुनौती है। हम इस चुनौती को लगातार स्वीकार कर रहे हैं और काफी हद तक कामयाब होते नजर आ रहे हैं।

केंद्र सरकार की ओर से जब भी किसी योजना की घोषणा की जाती है तो सबसे पहले इस बात का ध्यान रखा जाता है कि इस योजना का गांवों पर कितना असर पड़ेगा। स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी कुछ ऐसा ही है। कुछ दिन पहले हमारे प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने साफतौर पर कहा कि जब तक ग्रामीण इलाके के लोगों को आधारभूत सुविधाएं नहीं मिलेंगी, उनके जीने का आधार पुख्ता नहीं होगा, उन्हें रोजगार से नहीं जोड़ा जाएगा, तब तक देश व समाज का भला नहीं हो सकता है। उन्होंने साफ कहा कि हमने बजट के दौरान इस बात का खास ध्यान रखा कि योजनाओं की पहुंच गांवों तक हो। गांवों के विकास के लिए अतिरिक्त बजट का भी प्रावधान किया गया। लोगों के स्वास्थ्य की देखरेख के लिए भी अतिरिक्त बजट का प्रावधान किया गया है। सरकार का मानना है कि जब तक देश स्वस्थ नहीं होगा, तब तक स्वस्थ राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती है। स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार के लिए बजट की डिमांड करने वाली सरकारों को बजट मुहैया कराया जाएगा।

दिल्ली में आयोजित एक सेमिनार में पत्रकारों के सवाल का जवाब देते हुए केंद्रीय चिकित्सा मंत्री ने भी इस बात को दोहराया था कि राज्य सरकारें ग्रामीण इलाके में चिकित्सा सुविधा के विस्तार के लिए अपनी जरूरतें बताएं, सरकार उन्हें पूरा करेगी। इस तरह देखा जाए तो राज्य सरकार के अलावा केंद्र की ओर से भी ग्रामीण इलाके में स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए लगातार कोशिश की जा रही है। हां, इतना जरूर है कि अभी तक देश में अंतिम छोर तक वह सुविधाएं नहीं पहुंच पाई हैं, जिसकी दरकार है। केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की माने तो देश में 2083 लोगों पर एक चिकित्सक और छह हजार पर एक सहायक नर्स की नियुक्ति होनी चाहिए। शहरों में यह स्थिति तो बेहतर है, लेकिन ग्रामीण इलाके में अभी बहुत कुछ करने की गुजाइंश है। मानक के अनुरूप चिकित्सा सेवा नहीं पहुंच पाई है। केंद्र सरकार की ओर से भी तमाम योजनाएं चलाई जा रही हैं, लेकिन जनसंख्या की दृष्टि से अभी भी कम पड़ रही हैं। जिन्हें और बेहतर बनाने की जरूरत है। सरकार की ओर से लगातार स्थिति में सुधार की कोशिश की जा रही है। उदाहरण के तौर पर देखा जाए तो आजादी के समय जीवन प्रत्याशा 32 वर्ष थी, जो अब करीब 66 वर्ष से अधिक तक पहुंच चुकी है। पहले चेचक, प्लेग, मलेरिया सहित अन्य बीमारियों से लाखों लोग दम तोड़ देते थे, लेकिन अब इन महामारियों के अलावा हम पोलियो को भी दूर भगाने में सफल रहे हैं। स्वास्थ्य विभाग के आंकड़े यह साबित करते हैं कि पहले जहां अकेले एक गांव में सैकड़ों लोग मरते थे वहीं अब मलेरिया से करीब 20 लाख की आबादी में एक या दो लोगों की मौत होती है। करीब–करीब यही स्थिति अन्य क्षेत्रों में भी है। फिर भी अभी हमें बहुत कुछ करना है, जिसके लिए हमारी केंद्र एवं राज्य सरकारें तत्पर हैं। आगे अगर हम मातृ सुरक्षा की बात करें तो गांव स्तर पर आशा की नियुक्ति की गई है। शत–प्रतिशत प्रसव चिकित्सालय में कराने की कोशिश चल रही है, लेकिन अभी इसमें सफलता नहीं मिल पाई है। तमाम चुनौतियों के बीच हमारे देश के लोगों की सेहत में लगातार सुधार हो रहा है। हमारी स्वास्थ्य सेवाएं कई विकसित देशों की अपेक्षा बेहतर परिणाम दे रही हैं।

प्रमुख चुनौतियां

जनसंख्या नियंत्रण

जनसंख्या की ही बात करें तो हमारे देश के एक प्रदेश की जनसंख्या उतनी है जितनी दूसरे विकसित देशों की। जनसंख्या के मामले में अकेले उत्तर प्रदेश की जनसंख्या 16.6 करोड़ है, जबकि कनाडा की 3.1 करोड़, इटली की 5 करोड़, वियतनाम की 8 करोड़ और ब्राजील की 17 करोड़ के आसपास है। उत्तर प्रदेश की तरह महाराष्ट्र की 9.3 करोड़, बिहार की 8.3 करोड़, पश्चिम बंगाल आठ करोड़ के आसपास है। करीब–करीब अन्य बड़े राज्यों की भी स्थिति यही है। सबसे कम 0.8 करोड़ आबादी उत्तरांचल की बताई जाती है। ऐसे में जाहिर–सी बात है कि इतनी अधिक आबादी होने के बाद भी देश में सभी को स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया कराना एक बड़ी चुनौती है। इसे काबू करने के लिए तरह–तरह के अभियान चलाए जा रहे हैं।

कम उम्र में शादी–विवाह

तेजी से जनसंख्या वृद्धि के पीछे मूल कारण था कम उम्र में शादी–विवाह हो जाना। समय के साथ लोगों के विचार में बदलाव भी आ रहा है और सरकार की ओर से चलाए जा रहे जागरुकता अभियान का भी असर पड़ रहा है। अब लड़के की उम्र 21 और लड़की की उम्र 18 वर्ष निर्धारित कर दी गई है। इससे कम उम्र में शादी होने पर वर एवं वधु दोनों पक्षों को दोषी माना गया है। पहले उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल सहित तमाम राज्यों में बहुत ही कम उम्र में विवाह कर दिया जाता था। एनएफएचएस की रिपोर्ट के मुताबिक झारखंड में 70 फीसदी लड़कियों की शादी 18 वर्ष से पहले कर दी जाती है। इसी तरह बिहार में 69, राजस्थान में 67, आंध्र प्रदेश में 63, पश्चिम बंगाल में 62, मध्य प्रदेश में 60, उत्तर प्रदेश में 59, छत्तीसगढ़ में 30, महाराष्ट्र में 52, कर्नाटक में 49, हरियाणा में 45, असम में 41, गुजरात में 41, उड़ीसा में 40, दिल्ली में 35, उत्तराखंड में 30, तमिलनाडु में 30, पंजाब में 23, केरल में 20, जम्मू में 19 और हिमाचल प्रदेश में 14 फीसदी लड़कियां 18 वर्ष की उम्र तक पहुंचने से पहले ही ब्याह दी जाती हैं। जाहिर–सी बात है कि ऐसे में वे न तो आत्मनिर्भर बन पाती हैं और न ही इनकी शिक्षा हो पाती है। छोटी उम्र में ही घर–परिवार की जिम्मेदारी उन पर आ जाती है। फिर कुछ समय बाद ही वे मां बन जाती हैं। ऐसे में उनकी सेहत खराब होना और उनसे पैदा होने वाले बच्चे की सेहत का प्रभावित होना लाजिमी है। बाल विवाह के कारण जनसंख्या वृद्धि के साथ ही कुपोषण और मातृ–शिशु मृत्युदर को भी बढ़ावा मिला था, लेकिन धीरे–धीरे सब कुछ कंट्रोल होता नजर आ रहा है।

लिंगानुपात कम होना

हमारे देश में स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियां तो कई हैं, लेकिन लिंगानुपात का तेजी से घटना एक बड़ी चुनौती है। इसके लिए हर किसी को आगे आना होगा। लिंग अनुपात में तेजी से आ रही गिरावट को देखते हुए स्वास्थ्य विभाग की ओर से शिविर, सेमिनार का आयोजन किया जा रहा है, लोगों को समझाया जा रहा है कि बालक एवं बालिका के विभेद को मिटा दे। सरकार की ओर से जागरुकता अभियान चलाए जाने एवं शिक्षा का प्रसार होने से इसमें काफी हद तक सुधार हुआ है, लेकिन अभी स्थिति संतोषजनक नहीं है। भारत में अभी भी स्त्री–पुरुष अनुपात 933 प्रति हजार है, जबकि रूस में 1140 तो जापान में 1040 प्रति हजार है। करीब–करीब यही स्थिति अन्य विकसित एवं विकासशील देशों की है। प्रदेशवार आंकड़े देखे जाएं तो सबसे खराब स्थिति हरियाणा की है। यहां एक हजार पुरुषों

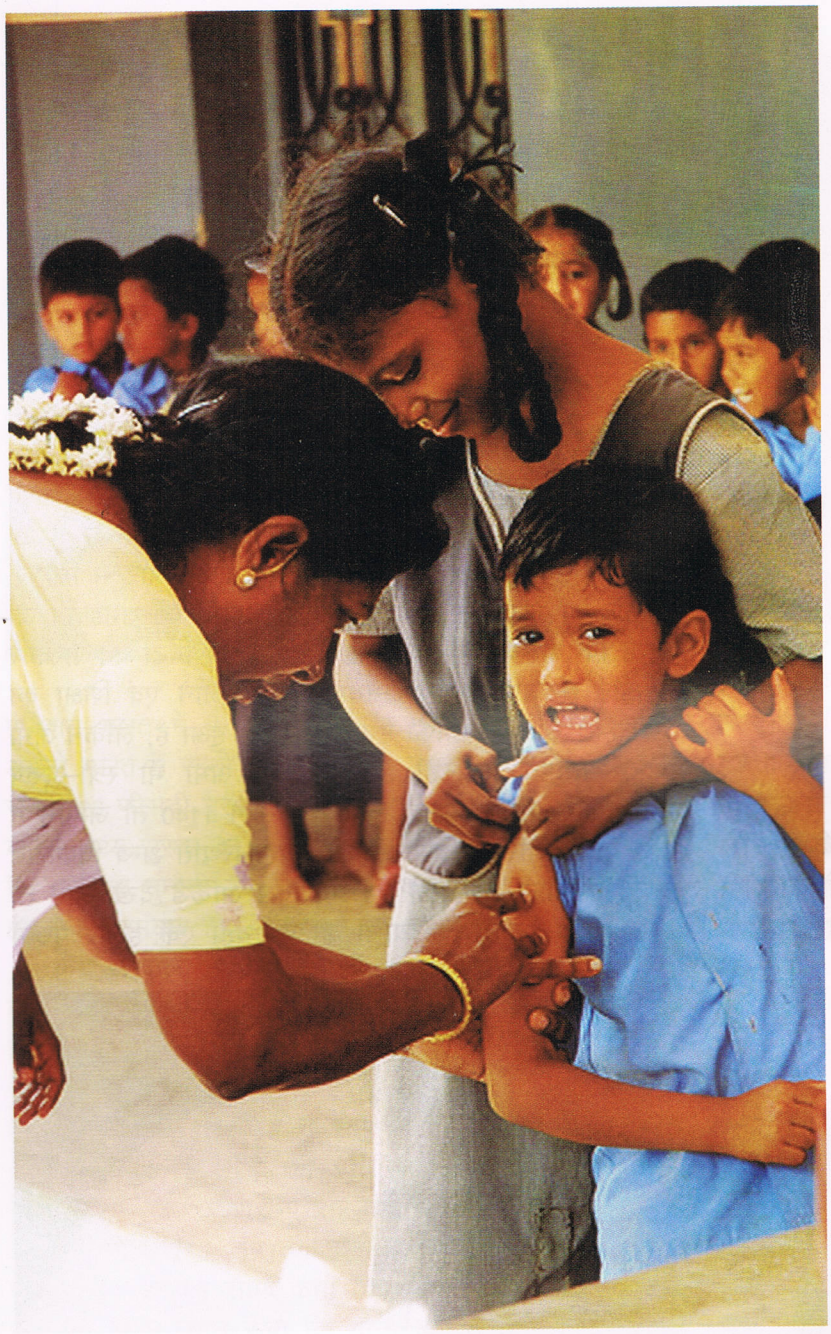

में सिर्फ 870 महिलाएं हैं। इसी तरह पंजाब में 879 हैं। उत्तर प्रदेश में 885, राजस्थान में 919, महाराष्ट्र में 937, गुजरात में 942, बिहार में 946, कर्नाटक में 963, आंध्र प्रदेश में 975, तमिलनाडु में 977, उड़ीसा में 981 और केरल में सर्वाधिक 1032 प्रति हजार हैं। यानी स्थिति स्पष्ट है कि हम केरल में सबसे अधिक जागरूक हैं, फिर भी यहां का आंकड़ा रूस की अपेक्षा कम है। अब सरकार की ओर से इस बात पर पाबंदी लगाई गई कि किसी भी डायग्नोसिस सेंटर पर भ्रूण की जांच नहीं की जाएगी। सभी डायग्नोसिस सेंटरों से इस आशय का हलफनामा भी लिया गया है और लगातार जांच की जा रही है। जांच में पकड़े जाने वाले सेंटरों के न सिर्फ लाइसेंस निरस्त किए जा रहे हैं बल्कि उनके खिलाफ सजा का भी प्रावधान किया गया है। इससे कुछ सुधार होने की उम्मीद है। साक्षरता बढ़ने के साथ ही लोगों के विचारों में बदलाव आ रहा है। उम्मीद की जानी चाहिए कि आने वाला समय सुनहरा होगा और लिंग अनुपात की यह खाई काफी हद तक पट जाएगी।

पंचायतों को मिले अधिकार

भारतीय संविधान के 73वें संशोधन के दौरान पंचायतों को स्वास्थ्य, स्वच्छता की भी जिम्मेदारी दी गई। उन्हें यह जिम्मेदारी दी गई कि वे पंचायत क्षेत्र में चिकित्सा सुविधाओं की निगरानी करें, स्वास्थ्य योजनाएं बनाएं। लेकिन दुखद पहलू यह है कि ज्यादातर स्थानों पर पंचायत स्तर पर स्वास्थ्य केंद्र नहीं हैं। उत्तर प्रदेश में कुछ स्थानों को छोड़ दें तो ब्लॉक द्वार पर ही स्वास्थ्य केंद्र हैं। आयुर्वेद चिकित्सालयों की स्थिति खस्ताहाल है। ऐसे में पंचायतों को मिलने वाले इस अधिकार का क्या मतलब रह गया है। पंचायतों को अधिकार के साथ ही चिकित्सालय बनाने और उनमें चिकित्सक की नियुक्ति की जिम्मेदारी भी निभानी होगी। सरकारी सभी रिक्त पदों को जल्द से जल्द भरे। चिकित्सकों के साथ ही दवाओं की भी व्यवस्था की जाए।

स्वास्थ्य सेवाओं में उत्तर प्रदेश की स्थिति

जागरुकता से मिली सफलता

स्वास्थ्य विभाग की ओर से शत–प्रतिशत संस्थागत प्रसव कराए जाने के अभियान में सबसे कारगर भूमिका जागरुकता अभियान की रही है। जब तक लोगों को संस्थागत प्रसव के फायदे बताए गए, उन्हें समझाया गया कि चिकित्सालय में प्रसव कराए जाने से जच्चा–बच्चा दोनों को लाभ होता है, लोग चिकित्सालयों की ओर रुख करने लगे हैं। पहले होता यह था कि प्रसव घर की अप्रशिक्षित महिलाएं ही कराती थी। इससे कई बार जच्चा तो कई बार बच्चे की मौत हो जाती थी। कई बार ऐसा भी होता था कि बच्चा पैदा होने के बाद साफ–सफाई तथा अन्य त्वरित समस्याओं के कारण दम तोड़ देता था। लेकिन चिकित्सालय में प्रसव होने की स्थिति में दोनों की जान को खतरा कम हो जाता है। सरकार के अभियान का असर कहें या लोगों की बदलती मानसिकता, कारण चाहे जो हो, लेकिन यह बात सच है कि संस्थागत प्रसव की संख्या बढ़ी है।

चिकित्सा सुविधाओं को बढ़ाने की जरूरत

अगर हम उत्तर प्रदेश की बात करें तो ब्लॉक स्तर पर ही प्राथमिक चिकित्सालय की व्यवस्था है। एक ब्लॉक में दो से ढाई सौ तक गांव हैं। ऐसे में लोगों को प्राइवेट चिकित्सालयों का सहारा लेना पड़ता है। जहां वर्ष 1994 में जन्मदर 36.8 और मृत्युदर 11.8 थी, वर्ष 1997 में जन्मदर 34.6 और मृत्युदर 10.7 पर पहुंच गई। उत्तर प्रदेश में ओपीडी में वर्ष 2005 में जहां 22 लाख मरीजों का इलाज किया गया वहीं 2008–09 में करीब 29 लाख मरीजों का इलाज किया गया। इससे जाहिर होता है कि अब लोगों में जागरुकता आई है और वे सरकारी चिकित्सालयों तक पहुंच रहे हैं; लेकिन अभी भी राज्य में स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव है। उत्तर प्रदेश में वर्ष 2001 की जनसंख्या के अनुरूप स्वास्थ्य सुरक्षा के लिए अभी भी 700 प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों एवं 582 सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों की जरूरत है। गायनॉकालॉजिस्ट की जरूरत 515 है, जबकि कार्यरत सिर्फ 131 ही हैं। गंभीर बात यह है कि 7295 के सापेक्ष सिर्फ 3340 नर्स कार्यरत हैं। ऐसे में सरकार को यह चुनौती भी स्वीकार करनी चाहिए। जिस तरह से हम विभिन्न महामारियों को दूर करने में सफल रहे, उसी तरह जनसंख्या के अनुरूप चिकित्सा सुविधाओं का विस्तार किया जाए; रिक्त पदों को भरा जाए; साथ ही ग्रामीण स्तर पर चिकित्सा केंद्र स्थापित करने की जरूरत है। जब तक गांव स्तर पर चिकित्सा केंद्र नहीं होंगे तब तक झोलाछाप चिकित्सकों का खात्मा नहीं किया जा सकेगा। क्योंकि सरकारी चिकित्सालय के दूर होने की स्थिति में ही ग्रामीण इलाके में झोलाछाप चिकित्सक लोगों का शोषण कर रहे हैं। ये चिकित्सा के नाम पर लोगों से मुंहमांगा दाम वसूलते हैं और एक रोग ठीक करने के बजाय दूसरे रोग दे देते हैं।

दिमागी बुखार को जड़ से खत्म करना जरुरी

पूर्वी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर सहित आसपास का पूरा इलाका दिमागी बुखार से पीड़ित रहा। इस इलाके में दिमागी बुखार की जड़ें काफी गहरी हो गई हैं। इसे दूर करने के लिए सरकार की ओर से लगातार कोशिश की जा रही है, लेकिन बारिश होते ही यह फिर से सिर उठाने लगता है। इसकी रोकथाम के लिए लगातार अभियान चलाए जाने की जरूरत है। हालांकि स्वास्थ्य विभाग का दावा है कि काफी हद तक इस पर काबू पा लिया है। विभागीय आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2005 में जहां 5581 मामले सामने आए और 1577 लोगों की मौत हुई वहीं वर्ष 2007 में यह संख्या घटकर 2675 हो गई और सिर्फ 577 की मौत हुई। वर्ष 2008 और 09 में भी यह आंकड़े कम हुए हैं। हालांकि गोरखपुर के साथ ही देवरिया, बस्ती, श्रावस्ती आदि जिलों में इसके मरीज खूब पाए गए, लेकिन समय रहते इलाज हो जाने के कारण लोगों की मौत पहले की अपेक्षा कम हुई हैं। ऐसे में सरकार की यह जिम्मेदारी बनती है कि वह ऐसे रोग को सिर्फ रोकने नहीं बल्कि उसके खात्मे के लिए भी कारगर कदम उठाए।

नकली दवाओं का कारोबार

ग्रामीण इलाकों में नकली दवाओं का कारोबार भी खूब चलता है। कई बार चिकित्सक दूसरी दवा लिखते हैं और मरीज को थमा दी जाती है दूसरी। इस कारोबार के जरिए भी ग्रामीणों के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ हो रहा है। इसे रोकने के लिए राज्य में औषधि नियंत्रण विभाग की स्थापना की गई है। केंद्र सरकार के निर्देश एवं राज्य सरकार की ओर से भी समय–समय पर चैकिंग अभियान चलाया जाता है। इससे भी मरीजों को काफी राहत मिलती है। इन दिनों बाजार में नकली दवाओं का कारोबार कुछ ज्यादा ही फल–फूल रहा है। इस पर पूरी तरह से पाबंदी लगाने की जरूरत है चूंकि नकली दवाओं का कारोबार किसी एक प्रदेश में नहीं चल रहा है। करीब–करीब हर राज्य में नकली दवाओं का कारोबार फैल चुका है, जो लोगों की जान को जोखिम में डाल रहा है। अगर हम उत्तर प्रदेश के आंकड़ों पर गौर करें तो वर्ष 2005–06 में यहां चले चैकिंग अभियान में 1817 नमूने लिए गए। इसमें 517 की जांच हुई और तीन नकली पाए गए। इसके आरोपी दो लोगों को गिरफ्तार किया गया। इसी तरह वर्ष 2007–08 के दौरान यहां 755 नमूनों की जांच कराई गई, जिसमें 17 नमूने फेल हुए और 64 लोगों की गिरफ्तारी हुई। आंकड़ों से साबित होता है कि ग्रामीणों के स्वास्थ्य के लिए यह कारोबार भी काफी भ्रष्ट हो चुका है। इसे पूरी तरह खत्म करना जरूरी है।

अन्य योजनाएं

फिलहाल अन्य प्रांतों की तरह ही उत्तर प्रदेश में भी राष्ट्रीय कुष्ठ रोग नियंत्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय अंधता नियंत्रण, एड्स नियंत्रण, क्षय नियंत्रण सहित कल्याण योजनाएं चल रही हैं। इन योजनाओं का ग्रामीणों को काफी हद तक लाभ भी मिल रहा है, लेकिन इन योजनाओं को और बेहतर बनाने की जरूरत है। जब तक सभी योजनाओं का लाभ ग्राम–स्तर पर लोगों को नहीं मिलेगा तब तक देश व समाज का भला नहीं हो सकता है। सरकार की यह जिम्मेदारी है कि वह योजनाओं को लागू करने के साथ ही उसके क्रियान्वयन पर भी ध्यान दे क्योंकि विभागीय आंकड़ों से ही देश व प्रदेश की चमक नहीं लौटेगी। स्वास्थ्य सेवाओं को आम जन तक पहुंचाने के लिए मानीटरिंग की व्यवस्था दुरूस्त करनी होगी। अगर सरकारें यह कार्य करने में सफल रही तो निश्चित रूप से भारत का भविष्य उज्जवल होगा और प्रधानमंत्री की ओर से उम्मीदें पूरी हो सकेंगी।

(लेखक अधिवक्ता हैं और स्वयंसेवी एवं सामाजिक संगठनों से जुड़े हुए हैं)
ई मेल : umarfaruqui.faruqi@gmail.com

गांवों में वैकल्पिक चिकित्सा व्यवस्था

डॉ. मीनाक्षी शर्मा

भारत ग्राम प्रधान देश है। देश में नगरों की अपेक्षा गांवों में चिकित्सा सुविधाएं ना के बराबर हैं जिस कारण वहां रोग अधिक पनपते हैं। ग्रामीण लोगों में जागरुकता का अभाव है इस कारण वे स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही बरतते हैं। आंकड़े बताते हैं कि राजस्थान में स्वाइन फ्लू से मरने वाले लोगों में आधे से अधिक ग्रामीण लोग हैं जो रोग को बढ़ाकर तब अस्पताल आते हैं जब रोग काबू से बाहर हो जाता है। गांवों में स्वास्थ्य के अतिरिक्त बेरोजगारी, अशिक्षा, गरीबी, मादक द्रव्य, व्यसन, मद्यपान जैसी गम्भीर समस्याएं हैं। यद्यपि सरकार का पूरा ध्यान गांवों की उन्नति पर रहता है व ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना जैसी अन्य कई योजनाएं ग्रामीणों के उत्थान के लिए चलाई जा रही हैं जिससे वे अपनी समस्याओं के प्रति सचेत रहे व उन्हें दूर करने का प्रयास करने में सरकार से कदम से कदम मिलाएं। शिक्षा के अभाव में ग्रामीण लोग अपने पूर्वजों के द्वारा छोड़ी गई व्यावहारिक ज्ञान की विरासत को भूलते जा रहे हैं और छोटी–छोटी बीमारियों की घरेलू चिकित्सा न करके उसको बढ़ाकर, जब वह विकराल रूप ले लेती है, तब डॉक्टर के पास जाते हैं और तब तक रोग पूरी तरह फैल चुका होता है। जरुरत आज इस बात की है कि भारत का हर नागरिक अपने आप को जागरूक बनाए। स्वच्छता व स्वास्थ्य का ध्यान रखे और अपने को वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों से निरोगी रखे।

आयुर्वेद के अनुसार हमारा शरीर पंच तत्व से बना है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। इन तत्वों में आपस में एक निश्चित आनुपातिक संबंध है। यदि किसी भी तरह यह अनुपात बिगड़ता है तो शरीर में रोग पैदा होते हैं। हमारी पांच इंद्रियां, आंख, कान, नाक, जीभ, तथा पांच कर्मेन्द्रियां हाथ, पैर, मुख, गुदा और लिंग हैं। भारतीय दर्शन के हिसाब से स्वस्थ जीवन के लिए यह आवश्यक है कि हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के नियमों से जीवन जीएं। हमारे खाने–पीने के नियम, सोने–उठने के नियम, आपस में व्यवहार के नियम, हमारे धर्मों में कहे गए सिद्धान्तों से काफी अलग हैं। यह अनियमितता स्वास्थ्य के नियमों के प्रतिकूल है। यही अनियमितता हमें बीमार बनाती है।

स्वास्थ्य का वास्तविक अर्थ 'शरीर निरोगी रहे' केवल इससे जुड़ा हुआ नहीं है। शरीर के साथ मन भी निरोगी रहेगा तभी स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। अधिकांश बीमारियों की जड़ "सायकोसामटिक" स्थिति को माना गया है जो सीधे मन की स्थिति से जुड़ी है। अगर मन अच्छा है तो बीमारियां भी कम होंगी। बीमारियों का दूसरा बड़ा कारण है बाहरी वातावरण का प्रभाव अर्थात् सर्दी, गर्मी, बरसात, मौसम का परिवर्तन, कीटाणुओं तथा दूषित वातावरण का प्रभाव। हमारे शरीर में तीन प्रकार के दोष होते हैं – (1) वात दोष (2) पित्त दोष (3) कफ दोष। ये तीनों दोष प्रत्येक मनुष्य में रहते हैं। जिस व्यक्ति में तीनों दोषों में जो दोष प्रधान होता है उस व्यक्ति में उसी दोष की प्रधानता वाले रोग पाए जाते हैं।

"वैकल्पिक चिकित्सा विधि आज रोगों के समाधान के रूप में बहुत प्रचलित हो रही है। लोग इस थैरेपी को प्राचीन एवं पाश्चात्य के सम्मिश्रण के रूप में देख रहे हैं। ऐलोपैथी के अलावा अन्य जो कुछ भी रोगों के उपचार के लिए किया जाता है, वह सब वैकल्पिक चिकित्सा के क्षेत्र में आता है। आज भारत के गांवों को जागरूक करने की आवश्यकता है। प्राथमिक विद्यालय स्तर पर हर बच्चे को स्वस्थ रहने के लिए वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों का ज्ञान दिया जाए ताकि भारत का हर बच्चा स्वस्थ रह सके। वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति ही ऐसी प्रविधि है जो बीमारियों से हमें बचाएगी व जीवनभर स्वस्थ रखेगी और एलोपैथी दवा से होने वाले कुप्रभावों से छुटकारा दिलाएगी।"

रोगोपचार की अनेक प्रचलित विधियां तथा एलोपैथी चिकित्सा पद्धति के निरंतर विकास के बावजूद बढ़ते जा रहे रोगों पर नियंत्रण नहीं लग पाया है। रोगों की लंबी फेहरिस्त है और रोगियों की संख्या भी लगातार बढ़ती जा रही है। एच.आई.वी. एड्स, कैंसर, मलेरिया, स्वाइन फ्लू, मधुमेह, हृदय रोग, रक्तचाप जैसी बीमारियों के उपचार में सुगमता अवश्य आयी है पर यह भी मानना होगा कि इनका इलाज, दवाएं व टैस्ट इतने महंगे हैं कि आम जनता की क्षमता के बाहर हैं। यद्यपि प्रयास जारी हैं और 'डॉट्स' जैसे कार्यक्रम के तहत घर के दरवाजे पर दस्तक देकर रोगी को दवा खिलाने का कार्य डॉक्टर कर रहे हैं। फिर भी रोकथाम पूरी तरह नहीं हो पा रही है। यही सोचना आज समय का तकाजा है कि रोगों की बढ़ोतरी पर नियन्त्रण के वैकल्पिक उपाय क्या हो सकते हैं। वैकल्पिक उपायों की बात आते ही आरोग्य के अनेक फलक हमारी नजरों के सामने खुल जाते हैं।

ऋतु के अनुसार आचरण विधि हमारे देश में एक समय में प्रचलित रही है। मोटे तौर पर छह ऋतुएं बसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंद, शिशिर हैं जो बारह मास की अवधि में दो–दो माह तक रहती हैं। इस कालक्रम के अनुसार हमारी दिनचर्या चलती रहे, यही ऋतुचर्या है। आहार, निद्रा, व्यायाम और स्नान, आदि हमारी जीवनचर्या के मुख्य आधार हैं। बहुत से अनुसंधानों से यह स्पष्ट है कि हृदय रोग, रक्तचाप, मधुमेह आदि शारीरिक कम मानसिक रोग ज्यादा हैं। जिस एलोपैथी चिकित्सा पद्धति का सम्पूर्ण दुनिया पर वर्चस्व है, वहां पर भी इस दृष्टि से कोई विशेष कार्य नहीं हुआ है। ऐसी निराशाजनक स्थिति में न्यूयार्क के एक प्रकाशन संस्थान 'रेडम् हाउस' ने डॉ. डीन ओरनिश की एक शोध पुस्तक 'प्रोग्राम फॉर रिवर्सिंग हार्ट डिजीज' प्रकाशित की है जो यह दावा करती है कि हृदय रोग का इलाज बिना दवा व शल्य–चिकित्सा के हो सकता है। दिल्ली स्थित आध्यात्म साधना केन्द्र तथा अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान ने मिलकर ऐसा अध्ययन किया है। आचार्य महाप्रज्ञ जी की "महावीर का स्वास्थ्य शास्त्र" भी स्वास्थ्य की वैकल्पिक विधि प्रस्तुत करती है।

वैकल्पिक चिकित्सा विधि आज रोगों के समाधान के रूप में बहुत प्रचलित हो रही है। लोग इस थैरेपी को प्राचीन एवं पाश्चात्य के सम्मिश्रण के रूप में देख रहे हैं। ऐलोपैथी के अलावा अन्य जो कुछ भी रोगों के उपचार के लिए किया जाता है, वह सब वैकल्पिक चिकित्सा के क्षेत्र में आता है।

प्रौद्योगिकी के युग में आजकल जीवन की दिशा बदल गई इसलिए मनो–सामाजिक बीमारियां बढ़ती जा रही हैं। जैसे– माइग्रेन, इनसोमनिया, मेंटल डिसआर्डर, साइनोसाइटिज, अस्थमा, इनडाइजेशन, अर्थराइटिस, थैरालिसिज, एम्जीया आदि कई बीमारियां जहां उम्र के एक पड़ाव पर होती थी, आज बचपन व युवावस्था में ही होने लग गई हैं। यू.के. में इस विषय पर अनेक अध्ययन हुए हैं। इस कारण आज इस वैकल्पिक पद्धति का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार की विधियों से चिकित्सा करने वाले के रोगी के प्रति भावनात्मक संबंध हो जाते हैं। ये विधियां लम्बी होती हैं और इन्हें ज्यादा समय देना पड़ता है। पर बीमारी जड़ से खत्म हो जाती है।

ऐसा माना जाता है कि स्पर्श और भावना से रोगी की चिकित्सा करने से उसे आराम अधिक तथा जल्दी मिलता है। उसे अपनत्व महसूस होता है और प्राकृतिक वस्तुओं द्वारा जब उपचार किया जाता है तो उसका कोई साइड इफेक्ट नहीं होता है। उसके खान–पान, सोने की आदतें, आराम का समय, मनोरंजन का समय कभी–कभी इन सभी का ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है। परहेज भी रोगी को पूरा रखना पड़ता है ताकि उसे रोग से जल्दी मुक्ति मिले।

हर्बल चिकित्सा : जड़ी–बूटियों से दवा बनाना यह भी वैकल्पिक चिकित्सा का एक स्वरूप है। प्राचीनकाल में पौधों एवं पौधों के रस से बीमारियों को दूर किया जाता था व स्वास्थ्य को ठीक रखा जाता था। एलोपैथी के आविष्कार के बावजूद डॉक्टर आज भी कुछ दवाइयों में पौधों व पौधों के रस को प्रयोग करते हैं। जड़ी–बूटी से चिकित्सा वाले इस तथ्य को दावे से कहते हैं कि रोगों के उपचार के लिए प्राकृतिक चिकित्सा यद्यपि देर से ठीक करती है पर यह एक कारगर विकल्प है।

हरिद्वार गंगातट पर मालिश करता आदमी

आहार और पोषक पूरक तत्व

आहार प्रविधि एक कारगर वैकल्पिक आहार व चिकित्सा है यह शरीर की जरूरत के मुताबिक आपको आहार उपलब्ध करा देता है ताकि शरीर स्वस्थ रहे। वैकल्पिक आहार में अमीनो एसिड, एन्जाइम, जड़ी–बूटी, खनिज, विटामिन मौजूद होते हैं ताकि यह शरीर को जरूरत के सभी तत्व दे सकें।

ऊर्जा औषधि विधि पर आधारित

वैकल्पिक चिकित्सा का यह क्षेत्र ऊर्जा से सम्बन्धित है जिसमें चुम्बकीय व जैवकीय क्षेत्र शामिल हैं। ची गांग और चुम्बकीय स्पर्श इस प्रविधि में आता है। चुम्बकीय प्रविधि वैकल्पिक चिकित्सा का एक कारगर विकल्प है। इस चिकित्सा पद्धति से चुम्बक की सहायता से दर्द का इलाज किया जाता है। इसे ची गांग पुकारा जाता है। यह एक पारम्परिक चायनीज औषधि का नाम है जो श्वसन प्रक्रिया को बढ़ाती है। यह रक्त संचार को बढ़ाता है तथा इम्यून सिस्टम को ठीक करता है।

थैरपैटिक स्पर्श चिकित्सा

यह वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति हाथों पर आधारित है। यह एक पुरातन आरोग्य विधि है। शारीरिक सन्तुलन को सन्तुलित करने के लिए आरोग्य विधि महत्वपूर्ण है। थैरपैटिक स्पर्श चिकित्सा करने वाले पूरे शरीर पर हाथों के स्पर्श द्वारा शरीर के ऊर्जा सन्तुलन को बढ़ाने में मदद करते हैं।

समायोजित शारीरिक प्रविधि पर आधारित एक्यूपंचर

लैटिन भाषा में Acos का अर्थ है सुई व Puncture का अर्थ है चुभना। यह घाव भरने की प्राचीन चीनी कला है। रोगों को दूर करने के लिए त्वचा पर स्टील, चांदी व सोने की सुई का प्रयोग किया जाता है। हमारे शरीर में लगभग 1000 एक्यूपंचर संकेत हैं जिनमें से एक्यूपंचर चिकित्सक 8 या 10 चुन लेता है। इस विधि के द्वारा रक्त के दबाव, हृदय की धड़कनों, गैस की बीमारियों तथा हार्मोन व्यवस्था को सही किया जाता है तथा हमारा शरीर तनाव व बीमारियों से दूर रहता है।

अरोमा थैरेपी

अरोमा थैरेपी एक बहुत प्राचीन पद्धति है। खुशबूओं का प्रयोग करके शरीर व मस्तिष्क को स्वस्थ रखने के लिए इस पद्धति में खुशबूदार तेल का प्रयोग किया जाता है जो हमारे शरीर में मस्तिष्क को तरोताजा रखता है। अरोमा थैरेपी न सिर्फ हमारे शारीरिक स्वास्थ्य को तरोताजा रखती है बल्कि यह हमारे मस्तिष्क की दशा व हमारी भावनाओं व सांसों को भी प्रभावित करती है।

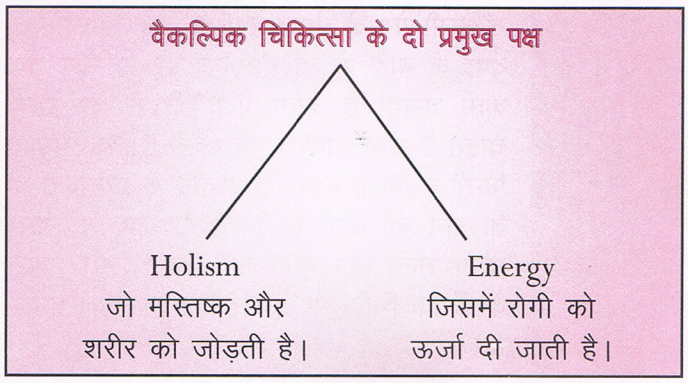

इन प्रविधियों के अलावा औरा थैरेपी है जिसमें रंग व क्रिस्टल को चक्र के द्वारा अपनी अंदकनी आंखों से पहचान कर इलाज किया जाता है। चेंटियां और रंग चिकित्सा, पुष्प थैरेपी, लाफ्टिंग थैरेपी भी वैकल्पिक चिकित्सा के रूप हैं जो विभिन्न रूपों से कार्य करता है।

चीरोपैट्रीक – यह शारीरिक संरचना को संतुलित करने की विधि है। इससे स्वास्थ्य को पूर्वस्थिति में लाया जा सकता है। अमेरिका में यह बहुतायत में लोगों के द्वारा मान्य है।

मसाज – यह थैरेपी प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से मसल्स को उत्तेजित करके टीशूज को मजबूत करती है। रक्त संचार को बढ़ाती है, सिरदर्द व शरीर दर्द को आराम देती है। यह थैरेपी शारीरिक विश्राम व थकान को दूर करने के लिए प्रायः विश्व में सभी जगह काम में ली जाती है।

मस्तिष्क व शारीरिक औषधि पर आधारित

इस प्रविधि में अनेक विकल्प हैं जो मस्तिष्क व शरीर को प्रभावित करती हैं व मजबूत बनाते हैं जोकि इस प्रकार हैं–

बायोफीडबैक – इस प्रविधि में आंतरिक शारीरिक प्रक्रिया को नियन्त्रित करके रोगों का इलाज किया जाता है। आंतरिक शारीरिक प्रक्रिया को नियन्त्रित करके ब्लड–प्रेशर, हृदय रोग, मसल्स टेंशन इत्यादि को दूर करने का प्रयास किया जाता है। माइग्रेन व सिर दर्द व असहनीय दर्द से छुटकारे के लिए इसे प्रयोग किया जाता है।

हाइपोनोसिस – यह वह वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति है जो पारम्परिक थैरपीज के साथ प्रयोग की जाती है। यह आंतरिक स्रोतों को खोजने में मदद करती है। यह मानसिक व शारीरिक बीमारियों को दूर करने में मदद करती है ताकि शारीरिक स्वास्थ्य के लक्ष्य को पाया जा सके।

ताईचई – यह वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति "क्रिया संग ध्यान" के रूप में प्रयुक्त की जाती है। व्यक्ति के स्वस्थ रहने का यह एक प्रभावशाली तरीका है। यह शारीरिक ऊर्जा को खर्च नहीं करती बल्कि ऊर्जा को सुरक्षित करती है।

योग – नाड़ी संस्थान तथा मस्तिष्क को स्वस्थ व शांत रखने के लिए योग के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है। मन–मस्तिष्क को स्वस्थ रखे बिना शरीर को स्वस्थ नहीं रख सकते। योग शरीर के तीन प्रमुख भागों मुद्रा आसन, श्वसन क्रिया एवं विश्राम को प्रभावित करता है। यह एक प्रभावशाली वैकल्पिक चिकित्सा विधि है। इससे शारीरिक बीमारियों के सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं।

सम्पूर्ण शारीरिक औषधि पर आधारित

वैकल्पिक चिकित्सा की यह प्रविधि सम्पूर्ण शरीर को मजबूत बनाती है। होम्योपैथी एवं पारम्परिक चायनीज चिकित्सा इस प्रविधि के अन्तर्गत आती है।

होम्योपैथी – होम्योपैथी के आविष्कारक महात्मा 'क्रिश्चियन फ्रेडटिक सेम्युअला हैनीमौन' थे। "समः समं शमयति" अर्थात् "समान के द्वारा समान की चिकित्सा" के सिद्धान्त पर आधारित है। गर्मी के प्रभाव को गर्मी से व ठंड के प्रभाव को ठंड से दूर करने के सिद्धान्त वाली यह चिकित्सा विधि सम्पूर्ण संसार के सभी भागों में सरल, सस्ती व लाभदायक है। रोग के लक्षणों के अनुरूप गुण धर्म वाली औषधि के प्रयोग से रोग को नष्ट करने में सक्षम होती है।

पारम्परिक चायनीज चिकित्सा – आहार एवं पोषक पूरक चिकित्सा प्रविधि भी वैकल्पिक चिकित्सा का एक भाग है। संतुलित पोषक तत्व जो शरीर की जरूरत के मुताबिक हो जिसमें अमीनो एसिड, जड़ी–बूटियों, खनिज तत्व, विटामिन और अन्य पोषक तत्व होते हैं, शरीर को स्वस्थ रखते हैं व बीमारियों से बचाते हैं।

प्राणायाम – प्राणायाम मस्तिष्क को शांत व एकाग्र रखता है व शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है। यह तनाव को दूर करने का एक सफल तरीका है तथा सारे शरीर में स्फूर्ति की तरंगें फैलाता

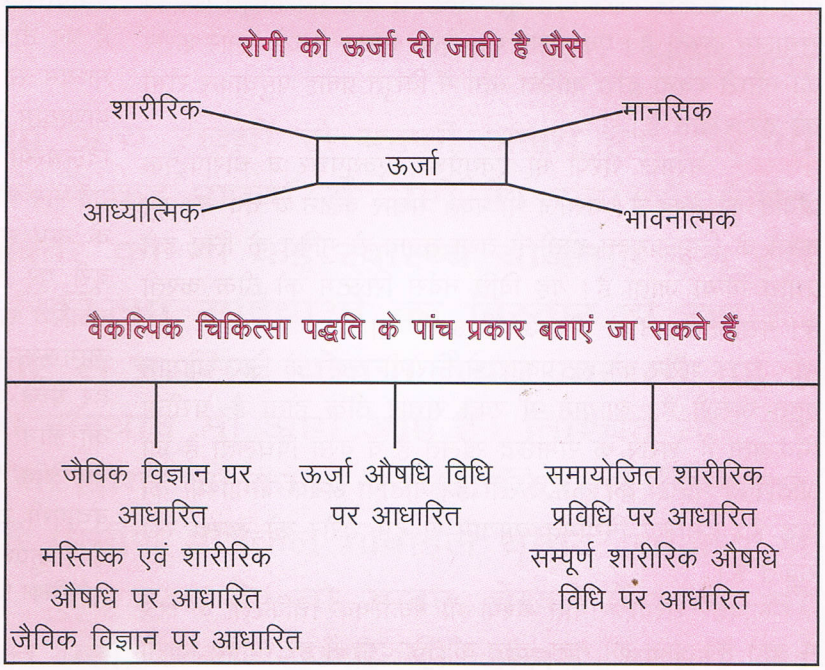

है। मानसिक एकाग्रता को जीवन भर बनाए रखने के लिए प्राणायाम एक प्रयोग सिद्ध तरीका है। स्वस्थ रहने के लिए जो व्यक्ति एक बार प्राणायाम शुरू कर देता है, बीमारियां उससे हमेशा दूर भागती हैं।

एक्यूप्रेशर – भारत में 500 वर्ष पूर्व एक्यूप्रेशर थैरेपी प्रचलित थी। दुर्भाग्य से हम उसे संभाल नहीं पाए और एक्यूपंक्चर के रूप में श्रीलंका पहुंची। श्रीलंका से बौद्ध भिक्षु इस पद्धति को चीन और जापान ले गए। वहां इसका व्यापक प्रचार हुआ। आज चीन विश्व को एक्यूपंचर पद्धति सिखा रहा है। एक्यूप्रेशर शब्द का अर्थ है उंगली, अंगूठे अथवा कुंद साधन से दबाव देकर शरीर को रोग मुक्त रखना। हमारा शरीर पंच महाभूतों अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश जैसे पांच मूल तत्वों से बना है। विद्युत उसका संचालन करती है। एक्यूप्रेशर एक ऐसा साधन है जो हमारे शरीर की भीतरी रचना द्वारा वांछित भाग में विद्युत प्रवाह पहुंचाकर रोगों को दूर रखता है।

मसाज – मसाज थैरेपी भी एक्यूप्रेशर, एक्यूपंचर व चीरोपैट्रीक प्रविधि की तरह है। मसाज भी रक्त संचार बढ़ाने व दर्द को दूर करने के लिए प्रयुक्त होती है तथा तनाव से मुक्ति के लिए इसे प्रयोग किया जाता है। यह विधि नर्वस सिस्टम को ठीक करती है। मसाज कराने से नींद अच्छी आती है।

व्यायाम – शरीर को हर प्रकार से निरोगी रखने के लिए व्यायाम बहुत जरूरी है। व्यायाम से रक्त संचार ठीक होता है, पसीना निकलता है, शरीर के रोमछिद्र खुलते हैं व वसा पिघलती है जो अतिरिक्त मोटापे को कम करती है। मोटापा अनेक बीमारियों की जड़ है। इसलिए नियमित व्यायाम से हम शरीर को स्वस्थ रख सकते हैं।

लाफ्टर थैरेपी, संगीत थैरेपी भी वैकल्पिक चिकित्सा के क्षेत्र में आते हैं। आज की भाग–दौड़ की जिन्दगी में हर व्यक्ति किसी न किसी रोग के चुंगल में फंसा हुआ है। ऐलोपैथी दवा के बाद के परिणाम के डर से जब तक काम चलता है, लोग ऐलोपैथी से दूर रहना चाहते हैं और कोशिश यह करते हैं कि उपर्युक्त किसी न किसी वैकल्पिक पद्धति के प्रयोग से या तो रोग को आने ही ना दिया जाए या अगर छोटा–मोटा आ भी जाए तो उससे पहले वैकल्पिक चिकित्सा से उसे दूर करने का प्रयास करें।

जोधपुर से 20 कि.मी. दूर चोखा गांव है। जोधपुर, राजस्थान की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा व विरासत वाला नगर है इसलिए जोधपुर के चारों तरफ बसे गांव भी धोरों से भरपूर हैं। चोखा गांव की आबादी करीब 3000 लोगों की है। राजस्थान सरकार के द्वारा गांव में रोजगार गारंटी योजना के तहत हर परिवार को रोजगार दिया जा रहा है। गांव में स्वास्थ्य केंद्र हैं जहां डॉक्टर व नर्स दोनों मौजूद थे। गांव में विद्यालय व पंचायत भवन भी हैं। गांव वालों से स्वास्थ्य के सम्बन्ध में बातचीत के दौरान पता लगा कि गांव के 90 प्रतिशत लोग बीमार होने पर या तो स्वास्थ्य केंद्र आते हैं या गांव से 8–9 कि.मी. दूर स्थित नर्सिंग होम में इलाज के लिए जाते हैं।

गांव की आर्थिक स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं थी। लोगों में जागरुकता का अभाव था। यह पूछने पर कि यदि डॉक्टर किसी कारण ना आ पाए तो बीमार होने पर क्या वह कोई वैकल्पिक चिकित्सा का साधन ढूंढेंगे। इस पर ग्रामीणों का जवाब था कि पुराने दादी–नानी के नुस्खे वह भूल गए हैं और उनको इस पर ज्यादा विश्वास भी नहीं था। योग, व्यायाम, प्राणायाम को जानते हैं पर टी.वी. पर सिर्फ दूरदर्शन आता है जिस कारण टी.वी के माध्यम से योग सीखने की असमर्थता उन्होंने जतलाई। योग व प्राणायाम अच्छा है पर इसे नियमित जीवन में लाने में उन्हें कोई दिलचस्पी नहीं थी क्योंकि उन्हें मजदूरी पर जाना पड़ता है और यह सब चीजें उन्हें व्यर्थ लगती हैं। मसाज व एक्यूप्रेशर, एक्यूपंचर के नाम सुने हैं पर प्रयोग नहीं किए। जोधपुर से 20 कि.मी. की दूरी पर स्थित इस गांव में वैकल्पिक चिकित्सा के प्रति इस नजरिये से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज भारत के गांवों को जागरूक करने की आवश्यकता है। प्राथमिक विद्यालय स्तर पर हर बच्चे को स्वस्थ रहने के लिए वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों का ज्ञान दिया जाए ताकि भारत का हर बच्चा स्वस्थ रह सके। वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति ही ऐसी प्रविधि है जो बीमारियों से हमें बचाएगी व जीवनभर स्वस्थ रखेगी और एलोपैथी दवा से होने वाले कुप्रभावों से छुटकारा दिलाएगी।

(लेखिका महिला पी.जी. महाविद्यालय, जोधपुर में समाज शास्त्र विभाग की वरिष्ठ व्याख्याता हैं।)

ई– मेल : dr.msl1962@gmail.com

यूं बदला राजस्थान के गांवों का स्वास्थ्य

संगीता यादव

राजस्थान की भौगोलिक स्थितियां अन्य राज्यों से काफी अलग है। फिर भी यह राज्य स्वास्थ्य सेवा के मामले में कई राज्यों से आगे है। यहां केंद्रपोषित योजनाओं के साथ ही राज्य सरकार की भी कई स्वास्थ्य योजनाएं चल रही हैं। भविष्य में यहां विश्वस्तरीय चिकित्सा सुविधाओं का विस्तार हो रहा है। इसके लिए राज्य सरकार की ओर से न सिर्फ योजना तैयार कर ली गई है बल्कि विभिन्न कारपोरेट चिकित्सा संस्थान भी आगे आए हैं। निश्चित तौर पर इस योजना के पूरा होने पर राज्य के लोगों को काफी फायदा मिलेगा। फिलहाल राज्य में चलने वाली 'राजीव गांधी ग्रामीण मेडिकल मोबाइल यूनिट' योजना से राज्य स्वास्थ्य के मामले में काफी सुदृढ़ हुआ है। तो आइए, देखते हैं कौन–सी ऐसी योजनाएं हैं, जो राजस्थान को अन्य राज्यों से अलग बनाती हैं।

राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राज्य है। यहां की भौगोलिक परिस्थितियां और सांस्कृतिक विरासत अपने आप में अलग विशिष्टता रखती हैं। राज्य का दो तिहाई भाग रेगिस्तानी तथा एक बड़ा भाग जनजाति बहुल एवं पहाड़ी है। रेगिस्तान क्षेत्र में तो सुरक्षित पीने का पानी उपलब्ध कराना भी दुष्कर है। ऐसे में राज्य के नागरिकों को समुचित चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करवाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। फिर भी राजस्थान में स्वास्थ्य सेवाओं का तेजी से विकास हो रहा है। संचारी, गैर–संचारी तथा अन्य सामान्य व गंभीर रोगों की रोकथाम, नियंत्रण व उन्मूलन के लिए स्वास्थ्य विभाग की ओर से विभिन्न योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। केंद्रपोषित योजनाओं के साथ ही राज्य सरकार की ओर से भी गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों के असाध्य एवं गंभीर रोगों से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए मुख्यमंत्री कोष की व्यवस्था की गई है।

राजस्थान की जनसंख्या नीति

जनसंख्या वृद्धि का कारण राज्य की विशेष भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि है। यहां का दो–तिहाई भाग मरू प्रदेश है और एक बड़ा भाग पर्वतीय एवं जनजाति क्षेत्र है। महिला साक्षरता 43.9 प्रतिशत है। महिलाएं आज भी संस्थागत प्रसव की अपेक्षा दाई द्वारा प्रसव करने पर ही अधिक महत्व देती हैं। ग्रामीण इलाके में कुछ स्थानों पर तो चिकित्सालयों की व्यवस्था नहीं है, लेकिन जिन स्थानों पर व्यवस्था है वहां भी संस्थागत प्रसव एक चुनौती है। इसके पीछे मूल कारण लोगों में जागरुकता का अभाव होना है। ग्रामीण इलाके के लोग सबसे सुरक्षित हैं। यही वजह है कि राजस्थान में पैदा होने वाले बच्चों के स्वस्थ एवं जीवित रहने की पूरी गारंटी नहीं है। कम आयु में विवाह तथा लड़का पैदा करने की चाह के कारण प्रदेश की जन्म दर तथा शिशु मृत्यु दर अधिक रही है। सरकार के आंकड़ों को देखें तो वर्ष 1901 में राज्य की जनसंख्या एक करोड़ थी जो अगले 50 वर्षों अर्थात 1951 में बढ़कर एक करोड़ 60 लाख तक पहुंच गई। यानी हर साल करीब एक लाख से भी अधिक व्यक्तियों की वृद्धि हुई। वह भी तमाम महामारियों, असुरक्षित प्रसव के दौरान होने वाली मौत आदि के बावजूद। 1951–61 के दशक में प्रति वर्ष 4 लाख की बढ़ोत्तरी हुई तथा 1961–71 में प्रति वर्ष 5.6 लाख की बढ़ोत्तरी दर्ज की गई।

इसी तरह 1971–81 में प्रति वर्ष 8.6 लाख तथा 1981–91 में प्रति वर्ष 10 लाख व्यक्ति राज्य की जनसंख्या में जुड़े हैं। इस प्रकार तेजी से बढ़ती हुई राज्य की जनसंख्या वर्ष 1991 में 440.06 लाख हो गई है व 2001 में यह आंकड़ा 565.07 तक पहुंच गया। इस जनसंख्या वृद्धि दर के अनुसार 1 मार्च, 2007 तक प्रदेश की जनसंख्या 6.47 करोड़ हो चुकी है। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण राज्य का जनसंख्या घनत्व, जो वर्ष 1981 में 100 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था, 1991 में बढ़कर 129 हो गया तथा वर्ष 2001 में यह 165 हो गया है। इस पर काबू पाने के लिए स्वास्थ्य विभाग की ओर से विभिन्न गतिविधियां चलाई जा रही हैं। परिवार कल्याण की आवश्यक सेवाएं उपलब्ध करवाकर परिवार सीमित करने के लिए संरक्षित किया जा रहा है। टीकाकरण एवं विशेष टीकाकरण अभियान भी चल रहे हैं। राजस्थान में कुछ ऐसे भी अभियान चल रहे हैं, जो अन्य प्रदेशों से एकदम अलग हैं। इन अभियानों के जरिए आम लोगों तक स्वास्थ्य सेवाएं पहुंच पाई हैं।

राजीव गांधी ग्रामीण मेडिकल मोबाइल यूनिट

यह राजस्थान की सबसे महत्वपूर्ण योजना है। इसका संचालन राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत ही किया जा रहा है। इस योजना के तहत राज्य में कुल 52 इकाइयां स्वीकृत की गई हैं। मरूस्थलीय, जनजातीय आदि दुर्गम क्षेत्र के लिए दो इकाई और अन्य जिलों के लिए एक इकाई का संचालन प्रस्तावित है। हर मेडिकल मोबाइल यूनिट के तहत दो वाहन निर्धारित किए गए हैं जिनमें से एक तो चिकित्सा दल के भ्रमण के लिए, जबकि दूसरा वाहन चिकित्सकीय परीक्षण के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इस वाहन में जांच उपकरण जैसे ईसीजी, एक्सरे, अल्ट्रा साउंड आदि की व्यवस्था होती है। साथ ही दवाएं भी मौजूद रहती हैं। दोनों वाहनों के लिए गांवों को निर्धारित किया जाता है, जहां शिविर का आयोजन होता है। मासिक आधार पर ये वाहन संबंधित गांव में पहुंचते हैं और ग्रामीणों को स्वास्थ्य सेवा प्रदान करते हैं। सभी सेवाएं राज्य सरकार की ओर से निशुल्क हैं। इसके तहत प्रमुख रूप से प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य, प्राथमिक उपचार, संक्रामक रोगों की रोकथाम, परिवार कल्याण, लैंगिक स्वास्थ्य के अलावा आपातकालीन सेवाएं प्रदान की जाती हैं। हर यूनिट के चिकित्सा दल में चिकित्सक, नर्स, लैब टेक्निशियन, कम्पाउंडर, वाहन चालक, एवं एक सहायक को शामिल किया गया है। इस योजना की निगरानी की जिम्मेदारी जिला स्वास्थ्य समिति को दी गई है। साथ ही कुछ गैर–सरकारी संगठनों से भी सहायता ली जाती है। इस योजना को लेकर ग्रामीणों में जबरदस्त उत्साह है। ग्रामीणों का कहना है कि मोबाइल मेडिकल यूनिट का संचालन होने से उन्हें काफी राहत मिली है। पहले इलाज के लिए दूरदराज के कस्बों में स्थित चिकित्सालयों तक जाना पड़ता था, लेकिन अब सभी स्वास्थ्य सुविधाएं खुद गांव तक पहुंच जाती हैं। एक उम्मीद रहती है कि जैसे ही उनके गांव का नंबर आएगा, पूरी टीम यहां मौजूद मिलेगी। खासतौर से बाड़मेर, जालौर, जैसलमेर, जोधपुर एवं उदयपुर में इस योजना से ग्रामीणों को काफी लाभ मिला है।

भ्रमणशील शल्य चिकित्सा इकाई

राजीव गांधी ग्रामीण मेडिकल मोबाइल यूनिट की तरह ही राज्य में भ्रमणशील शल्य चिकित्सा इकाई का भी संचालन हो रहा है। इसकी स्थापना 1956 में ही कर दी गई है। यह पांच

सौ शैयाओं का चलता–फिरता अ श्रेणी का अस्पताल है जिसमें अ श्रेणी के अस्पताल की सभी सेवाएं मौजूद हैं। विशेष परिस्थितियों में शैयाओं की संख्या बढ़ाकर एक हजार तक कर दी जाती है। यह इकाई राजस्थान के ग्रामीण इलाके में निशुल्क चिकित्सा शिविर आयोजित करती है। इकाई की ओर से आमतौर पर हर वर्ष सितंबर से मई तक शिविर लगाए जाते हैं। इसमें सभी प्रकार के ऑपरेशन जैसे, त्वचा की गांठें, ट्यूमर, आर्निया, एपेंडिक्स, गुर्दे की पथरी, पोस्टेट, बांझपन, नाक, कान, आंख के आपरेशन, दंत आपरेशन आदि की सुविधा है।

डॉट कार्यक्रम के अन्तर्गत टी.बी. के रोगी को अपने सामने गोलियां खिलाते स्वास्थ्य कार्यकर्ता

नवजात शिशु गहन चिकित्सा इकाई

राज्य में 35 नवजात शिशु गहन चिकित्सा इकाई की स्थापना की गई है। इस दिनों राज्य के टोंक, ब्यावर, भीलवाड़ा, गंगानगर, हनुमानगढ़, सीकर के अलावा सभी मेडिकल कालेजों में यह योजना चल रही है। जल्द ही इसे राज्य के सभी चिकित्सालयों में लागू करने की योजना है। प्रत्येक चिकित्सा इकाई में आठ नर्सों की नियुक्ति की गई है। इसके अलावा इकाई में डाक्टर व अन्य मेडिकल स्टाफ की नियुक्ति की जाती है।

जनमंगल योजना

जनमंगल योजना के माध्यम से गांव–गांव में जनमंगल जोड़े परिवार कल्याण के अंतराल साधन उपलब्ध करवा रहे हैं। परिवार कल्याण कार्यक्रम में महिलाओं की अहम भूमिका है, अतः महिला स्वास्थ्य संघों को सुदृढ़ करने के प्रावधान किए गए हैं ताकि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं को विभाग के विभिन्न कार्यक्रमों की जानकारी हो सके तथा वे इससे लाभान्वित हो सकें। जनमंगल जोड़ों का चयन संबंधित ग्राम की एएनएम की ओर से किया जाता है। जनमंगल जोड़ों को हर दो माह में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र बुलाया जाता है, जहां उनके कार्यों की समीक्षा की जाती है। एक जोड़े को दो सौ रुपये का मानदेय दिया जाता है। ये जोड़े गांवों मे दूसरे लोगों को प्रशिक्षित भी करते हैं।

मुख्यमंत्री सहायता कोष

राज्य सरकार द्वारा 24 हजार रुपये तक की वार्षिक आय अर्जित कर रहे परिवारों को, जो बीपीएल की चयनित सूची में नहीं हैं, उन्हें गंभीर रोगों के निदान/उपचार पर होने वाला व्यय मुख्यमंत्री सहायता कोष से दिया जा रहा है। इस वर्ग के परिवारों को उपचार की शत–प्रतिशत राशि नहीं देकर, निर्धारित मापदंडों के अनुरूप इलाज पर होने वाले व्यय की शत–प्रतिशत राशि का लगभग 40 प्रतिशत स्वीकृत करने का प्रावधान किया है। माननीय मुख्यमंत्री के आदेशानुसार अधिक राशि भी स्वीकृत की जा सकती है। चौबीस हजार रुपये तक वार्षिक आय अर्जित करने वाले परिवारों को, जो बीपीएल की चयनित सूची में नहीं हैं, उन्हें निदान/उपचार पर व्यय राशि शत–प्रतिशत नहीं दी जाकर सहायता के लिए निम्न मापदंडों के अनुसार दी जाती है :–

- हृदय के एक वाल्व परिवर्तन हेतु अधिकतम तीस हजार रुपये।
- बाईपास सर्जरी या दो वाल्व परिवर्तन पर अधिकतम पचास हजार रुपये।
- किडनी ट्रांसप्लांट के लिए अधिकतम पचास हजार रुपये।
- कैंसर के इलाज के लिए अधिकतम पचास हजार रुपये।

जीवन रक्षा कोष

राजस्थान के लिए यह महत्वपूर्ण योजना मानी जाती है। इसकी शुरुआत एक जनवरी 2009 से हुई। इसके तहत गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वालों को गंभीर रोगों की जांच एवं उपचार की सुविधा, एवं आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। एनआरएचएम के तहत वर्ष 2009–10 में इस योजना के लिए

50 करोड़ रुपये की राशि प्रस्तावित की गई है। इसे मुख्यमंत्री जीवन रक्षा कोष सोसाइटी के तहत संचालित किया जाता है। इस योजना का उद्देश्य है कि पात्र गरीब रोगियों को विशिष्ट चिकित्सालयों में चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध कराना।

इन रोगों में मिलती है सुविधा

- हृदय संबंधी : पेसमेकर्स, टीएमटी, इकोकार्डियोग्राफी, एंजियोप्लास्टी, एथीरेक्टोमी, एक्वायर्ड हृदय रोग, वेस्कुलर सर्जरी एटंटस हेतु ग्राफ, हृदय प्रत्यारोपण।
- कैंसर : रेडियेशन उपचार, एंटी कैंसर कीमोथेरेपी।
- गुर्दा व मूत्र रोग : डायलिसिस तथा इसके काम आने वाले कंज्यूमेविल गुड्स, डायलिसिस के लिए वेस्कुलरशट, पीसीएन व पीसीएनएल किट्स। लिथोट्रिप्सी, एंडोस्कोपिक सर्जिकल प्रक्रिया के लिए डिस्पोजेबल स्टेन्ट्स, गुर्दा व लीवर प्रत्यारोपण।
- अस्थि रोग : आर्टिफिशियल प्रोस्थेसिस फोर लिम्स, कूल्हे व घुटने के जोड़, रिप्लेसमेंट के लिए इम्प्लांट, एक्सटर्नल फिक्सेटर, हड्डियों की बीमारियां तथा फ्रैक्चर्स में काम आने वाले एओ इम्प्लांट्स।
- थैलीसीमिया : थैलीसीमिया रोग के उपचार के लिए दवाईयां, मैकेनिकल इम्यूजन पंप, ब्लड ट्रांसफ्यूजन, बोनमेरो प्रत्यारोपण।
- अन्य : इंट्रा आक्यूलर लैंस इम्प्लांट, श्रवण यंत्र हाईड्रोसिफेलस के लिए शंटस।

यशोदा योजना

राजस्थान में नार्वे इंडिया पार्टनरशिप इनिशिएटिव (निपी) के तहत अलवर, भरतपुर, दौसा जिले में यशोदा नामक योजना का संचालन किया जा रहा है। इसके तहत महिलाओं का चयन किया जाता है और उन्हें यशोदा नाम दिया जाता है। ये महिलाएं स्वैच्छिक, गैर–चिकित्सकीय कार्यकर्ता हैं जो चिकित्सालयों पर अपनी सेवाएं देती हैं। इन्हें गर्भवती महिलाओं, प्रसूताओं, नवजात शिशुओं की देखभाल की जिम्मेदारी सौंपी गई है। ये प्रसूता को स्तनपान, टीकाकरण सहित अन्य तरह की जानकारी देती है। हर यशोदा को चार नवजात शिशुओं की देखभाल की जिम्मेदारी दी जाती है। इन्हें प्रति प्रसव के हिसाब से सौ रुपये का मानदेय दिया जाता है। इन तीनों जिलों में इन दिनों 51 यशोदा कार्यरत हैं।

धनवंतरी एम्बुलेंस सेवा

राजस्थान की जनता को आपातकालीन चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराने के लिए धनवंतरी एम्बुलेंस सेवा चलाई जा रही है। यह राजस्थान सरकार व ईएमआरआई, सिकंदराबाद के सहयोग से सितंबर 2008 से शुरू की गई है। ईएमआरआई राजस्थान की पहली ऐसी संस्था है जो एकल एमरजेंसी नंबर से चिकित्सा, पुलिस व आग संबंधी सेवा प्रदान करती हैं। जनता की ओर से 108 नंबर पर डायल करने पर इसकी सेवाएं मुफ्त में प्राप्त की जा सकती हैं। काल के 25 मिनट के अंदर संबंधित स्थान पर एम्बुलेंस पहुंच जाती है। वर्ष 2008–09 में कुल 150 एम्बुलेंस प्रदेश की जनता की सेवा में लगाई गई।

बालिका संबल योजना

राजस्थान में लिंगभेद को रोकने के लिए बालिका संबल योजना की शुरुआत की गई है। वर्ष 2007–08 के बजट के दौरान इसकी घोषणा की गई, जबकि एक अप्रैल 2007 से इसे लागू कर दिया गया। इस योजना का उद्देश्य जन्म से लेकर पांच वर्ष तक की बालिकाओं को उनके सुरक्षित भविष्य के लिए आर्थिक संबल प्रदान करना है। इसके तहत जो दंपति एक या दो बच्ची होने पर नसबंदी करा लेते हैं, उन्हें हर बालिका के नाम से 10–10 हजार रुपये की राशि यूटीआई म्यूचअल फंड की सीसीपी योजना के तहत जमा करवाया जाता है। बालिका की 18 वर्ष की आयु पर बांड परिपक्व हो जाता है, जो राशि कुल मिलाकर करीब 76,900 तक हो जाती है। फिलहाल वर्ष 2007–08 में इस योजना से कुल 165 एवं वर्ष 2008–09 में 383 बालिकाओं को लाभान्वित किया गया है।

अन्य योजनाएं

इसके अलावा राजस्थान में अन्य तमाम तरह की योजनाओं का संचालन किया जा रहा है, जो करीब–करीब दूसरे प्रदेशों में भी चल रही हैं। इसमें प्रमुख निम्न योजनाएं हैं–

- राष्ट्रीय स्वास्थ्य ग्रामीण मिशन संबंधी योजनाएं
- प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम–2
- राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम
- राष्ट्रीय अंधता नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय वैक्टरजनित रोग नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम
- राष्ट्रीय कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम
- राष्ट्रीय क्षय नियंत्रण कार्यक्रम
- कुपोषण उपचार केंद्र

राज्य में पांच साल की उम्र से कम 42 फीसदी बच्चे कुपोषण से ग्रसित हैं। इस समस्या के समाधान के लिए राज्य में 38 कुपोषण उपचार केंद्र बनाए जा रहे हैं जिनमें से 22 एमटीसी द्वारा प्रदेश के करीब चार हजार बच्चों की सेहत सुधारी जाएगी। यहां भर्ती होने वाले हर बच्चे का निःशुल्क इलाज किया जाएगा। हर एमटीसी में एनआरएचएम की ओर से चार नर्सों की नियुक्ति की जा चुकी है।

खुशनुमा होगी भविष्य की तस्वीर

राजस्थान की राजधानी जयपुर तेजी से विकसित हो रही है। अब यहां चिकित्सा के क्षेत्र में भी वर्ल्डक्लास सुविधाएं उपलब्ध कराने की कोशिश चल रही है। सरकारी प्रयास के साथ ही कुछ

प्राइवेट चिकित्सालय भी इस दिशा मे काम कर रहे हैं। जाहिर–सी बात है कि इसका फायदा पूरे राजस्थान के लोगों को मिलेगा। न्यूरो और कार्डियक पेशेंट्स के बेहतर इलाज की व्यवस्था की तैयारी चल रही है। यहां कई कॉरपोरेट अस्पताल भी खुल रहे हैं। एनएबीएच बोर्ड से अस्पतालों को मंजूरी मिलने के बाद न्यूरो सर्जरी में एंडोस्कोपी और स्टिरोयोटैक्टिक टेक्नोलॉजी के जरिए लोगों का इलाज हो सकेगा। इससे सर्वाइकल इंजरी से होने वाली मौत रोकी जा सकेगी। एसएमएस हॉस्पिटल के न्यूरोसर्जन डॉ. आरएस मित्तल का कहना है कि जैसे–जैसे हम टेक्नोलॉजी के स्तर पर सुदृढ़ होंगे वैसे ही हमारी चिकित्सा व्यवस्था और कारगर साबित होने लगेगी। न्यूरो पेशेंट्स को सर्जरी और अन्य रोगों के इलाज के लिए मुंबई, दिल्ली नहीं जाना पड़ेगा।

इसी तरह कैंसर के मरीजों के लिए ओरल कीमोथैरेपी शुरू हो रही है। टारगेट थैरेपी के कीमो थैरेपी देने से साइड इफैक्ट्स कम होंगे। कैंसर स्पेशलिस्ट डॉ. अजय बाफना की मानें तो क्लीनिकल ट्रायल बढ़ने से इलाज की नई टैक्नोलॉजी आएगी। इसी तरह राजधानी के कुछ अस्पतालों की ओर से हैलीकॉप्टर एम्बुलेंस सर्विस शुरू करने की तैयारी है। इससे ग्रामीण इलाके के लोगों को काफी फायदा होगा। तैयारी है कि टेलीफोन अथवा मोबाइल से सूचना मिलते ही मेडिकल टीम हैलीकॉप्टर से मौके पर पहुंचेगी और मरीज को जिस तरह की जरूरत होगी, संबंधित अस्पताल पहुंचाएगी। एसएमएस अस्पताल के सर्जरी डिपार्टमेंट के हेड एन एस शेखावत कहते हैं कि जल्द ही राज्य मे ड्रग डिलीवरी सिस्टम विकसित होगा। इससे इसके तहत नैनो पार्टिकल व्हीकल से ड्रग्स दी जाएगी। स्टैम सेल थैरेपी विकसित होने से ऑर्गन ट्रांसप्लांटेशन पेशेंट के ऑर्गन से ही होगा, डोनर की जरूरत नहीं पड़ेगी। वंशानुगत बीमारियां जींस रिप्लेसमेंट से ठीक होंगी।

स्वास्थ्य सुरक्षा के साथ संवर्धन भी

राजस्थान में स्वास्थ्य सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए राजस्थान के विभिन्न जिलों में औषधीय खेती भी कराने की तैयारी है। सरकार का मानना है कि जब राज्य में औषधीय पौधों की खेती होगी तो इसका फायदा न सिर्फ इलाज में ही मिलेगा बल्कि किसानों की माली हालत में भी सुधार होगा। यानी एक साथ दोहरा लाभ होगा। विभिन्न दवाओं को दूसरे राज्यों से नहीं खरीदना पड़ेगा। यही वजह है कि केंद्र की ओर से पोषित राष्ट्रीय औषधीय पादप मिशन को लेकर राज्य में पहलकदमी तेज हो गई है। इससे केंद्र सरकार की जंगलों के विनाश को रोकने, आयुष उद्योग को कच्चे माल की आपूर्ति करने एवं कृषकों की आमदनी बढ़ाने के साथ ही राज्य में कृषि विविधिकरण व निर्यात को बढ़ावा देने का उद्देश्य पूरा हो सकेगा।

मिशन के तहत औषधीय पौधों की नर्सरी लगाने तथा खेती करने से लेकर उनके मूल्य संवर्धन, भंडारण, प्रसंस्करण व विपणन की सुविधाओं के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। इस मिशन के तहत राज्य में अलग–अलग क्षेत्रों की जलवायु के अनुसार औषधीय पौधों की खेती कराई जा रही है। इलाके के चयन की जिम्मेदारी और पूरी योजना के संचालन की जिम्मेदारी उद्यान विभाग को दी गई है। योजना के बावत उद्यान विभाग के सहायक निदेशक दानवीर सिंह ने बताया कि किसानों को विस्तार से जानकारी दी जा रही है। उन्हें प्रशिक्षित कर खेती कराई जाएगी। इससे किसानों को काफी फायदा मिलेगा। वह बताते हैं कि अभी तक जिन किसानों को इस खेती के बारे में जानकारी दी गई है, उनमें काफी उत्साह है। वे औषधीय खेती करना चाहते हैं।

राज्य में बनी योजना के मुताबिक प्रमुख रूप से अश्वगंधा, सोनामुखी, ग्वारपाठा, गिलोय, सतावरी, कालमेघ, कौंच, तुलसी, कलिहारी, गुग्ल, सर्पगंधा की खेती कराई जाएगी। इसमे पश्चिमी राजस्थान में पाली जिले में सोनामुखी व ग्वारपाठा, जालोर में सोनामुखी तथा सिरोही में सोनामुखी व सर्पगंधा के बगीचे लगाए जा रहे हैं। योजना के तहत औषधीय फसलों की खेती पर लागत का 20 से 75 फीसदी तक अनुदान की व्यवस्था की गई है। ड्राइंग शेड एवं भंडारण गृह पर 50 फीसदी एवं अधिकतम ढाई रुपये का अनुदान दिया जाएगा। पौधों की नर्सरी पर भी अनुदान की व्यवस्था की गई है। आधुनिक नर्सरी पर कुल लागत का 50 फीसदी एवं अधिकतम 10 लाख जबकि छोटी नर्सरी पर कुल लागत का 50 फीसदी एवं अधिकतम दो लाख का अनुदान दिया जाएगा। इस योजना में यह भी प्रावधान किया गया है कि जो किसान जैविक विधि अपनाकर औषधीय पौधे उगाएंगे उन्हें प्रति हेक्टेयर 10 हजार रुपये की सहायता दी जाएगी। इसमें अधिकतम चार हेक्टेयर में सहायता दी जाएगी। जैविक उत्पाद के प्रमाणीकरण के लिए 50 हेक्टेयर क्षेत्र के किसानों के समूह को अधिकतम 5 लाख रुपये को सहायता दी जाएगी। औषधीय पौधों को सुखाने के लिए ड्राइंग यार्ड व अन्य कम तापक्रम प्रणाली युक्त प्लेटफार्म बनाने के लिए निजी क्षेत्र में लागत का 50 प्रतिशत या अधिकतम 2.50 लाख रुपये तथा सार्वजनिक क्षेत्र की संस्थाओं, सहकारी संस्थाओं व स्वयंसहायता समूहों को पांच लाख रुपये प्रति इकाई अनुदान दिया जाएगा। विपणन सुविधायुक्त क्षेत्र में भंडारण के लिए 2.50 व 5 लाख रुपये अनुदान दिया जाएगा।

पाली के किसान मनीष शर्मा बताते हैं कि उद्यान विभाग की ओर से उन्हें औषधीय खेती के बारे में जानकारी दी गई है। वह ग्वारपाठा की खेती करने की तैयारी में हैं। इसी तरह सिरोही के किसान राजकुमार राजपुरोहित बताते हैं कि उन्होंने सर्पगंधा के लिए बात की है। उनके एक रिश्तेदार, जो गंगानगर में रहते हैं, पहले से ही सर्पगंधा की खेती कर रहे हैं। उन्हें काफी लाभ मिला है। उन्होंने इस योजना के बारे में जानकारी दी। कृषि विभाग से

संपर्क करने पर खेती एवं सरकार की ओर से मिलने वाले अनुदान के बारे में भी जानकारी मिल गई है। जल्द ही हम यह खेती शुरू करेंगे।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन को वाहवाही

वर्ष 2005 में शुरू हुए राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के जरिए ग्रामीण इलाके की स्वास्थ्य सुविधाओं को काफी तवज्जो मिली है। ग्रामीणों के स्वास्थ्य की देखभाल में इस योजना का महत्वपूर्ण योगदान बताया जा रहा है। कुछ दिन पूर्व जारी रिपोर्ट में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) ने राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) की सराहना करते हए कहा है कि इसकी बदौलत सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली में एक नई ऊर्जा का संचार हुआ है।

कैग ने एनआरएचएम की ऑडिट रिपोर्ट संसद में भी पेश की। जिसमें स्पष्ट कहा गया है कि जिन राज्यों में एनआरएचएम के तहत कार्यक्रमों का क्रियान्वयन गुणवत्ता और बेहतर कवरेज को ध्यान में रखकर हुआ है, वहां अच्छी प्रगति देखने को मिली है। मिशन के तहत 6.16 लाख आशाओं की नियुक्ति की गई है, जो मरीजों में जागरुकता बढ़ाने में मददगार साबित हुई है। इसके चलते स्वास्थ्य केंद्रों पर मरीजों की पहुंच बढ़ी है। रिपोर्ट के मुताबिक आठ राज्यों और संघशासित प्रदेशों में प्रसव के बाद देखरेख की सुविधा पाने वाली महिलाओं का प्रतिशत बढ़ा है। मिशन के तहत संशोधित राष्ट्रीय टीबी नियंत्रण कार्यक्रम के भी उपचार की दर लगभग 85 प्रतिशत रही है। एनआरएचएम सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली में नई जान फूंकने मे कामयाब रहा है। इससे उम्मीदें जगी हैं। केंद्र सरकार की ओर से वर्ष 2008 तक एनआरएचएम के तहत 24,151 करोड़ रुपये जारी किए।

ग्रामीण स्वास्थ्य को एक और सौगात

केंद्र सरकार की ओर से ग्रामीण इलाके के लोगों की स्वास्थ्य सुविधाएं बढ़ाने के लिए लगातार अभियान चलाया जा रहा है। अभी तक तमाम चिकित्सक एमबीबीएस की डिग्री लेने के बाद शहर छोड़ देते थे। वे ग्रामीण इलाके के बजाए शहरी इलाके में ही प्रैक्टिस करना पसंद करते थे। इसके लिए वे किसी न किसी तरह अपना ट्रांसफर शहरी इलाके में करा लेते थे। अब ग्रामीण इलाके में सेवा देने वाले डॉक्टरों को स्नातकोत्तर कक्षाओं में प्रवेश पर 25 फीसदी आरक्षण देने की तैयारी है। भारतीय चिकित्सा परिषद (एमसीआई) ने केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय को यह प्रस्ताव भेजा है। इतना ही नहीं परिषद की ओर से ग्रामीण क्षेत्र में चिकित्सा सेवा बेहतर बनाने और डाक्टरों की कमी दूर करने के लिए कुछ अन्य प्रस्तावों पर भी विचार चल रहा है।

एमसीआई के अध्यक्ष डॉ. केतन देसाई ने कहा कि सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में बेहतर चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए भारी धनराशि खर्च कर रही है लेकिन डाक्टरों की कमी के कारण ज्यादातर प्राइमरी और सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र प्रभावित हो रहे हैं। इससे निपटने के लिए एमसीआई ने कुछ और महत्वपूर्ण सुझाव भेजे हैं जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित मेडिकल कालेजों में साढ़े तीन साल में ही मेडिकल डिग्री देने का प्रस्ताव शामिल है। ग्रामीण मेडिसिन और सर्जरी में बैचलर डिग्री (बीआरएमएस) के लिए छात्रों का चयन बारहवीं में फिजिक्स, केमिस्ट्री और बायोलॉजी में प्राप्त अंकों के आधार पर किया जाएगा। शर्त यह होगी कि छात्र की स्कूली शिक्षा दस हजार से कम आबादी वाले गांवों में हुई हो। बीआरएमएस ग्रेजुएट को राज्य मेडिकल बोर्डों से पंजीकरण कराना होगा और उन्हें केवल उसी क्षेत्र में प्रैक्टिस की अनुमति दी जाएगी जिसमें उन्होंने शिक्षा ली है।

राजस्थान का आधारभूत स्वास्थ्य ढांचा

चिकित्सालय	127 (मेडिकल कॉलेज से जुड़े 25 चिकित्सालय)
सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र	367
प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र	1503
औषधालय	199
मातृ शिशु कल्याण केंद्र	118
प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (शहरी)	37
उपस्वास्थ्य केंद्र	10995
एडपोस्ट (शहरी)	13
शैय्याएं	43779

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेल : sangeetayadavshivam@gmail.com

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता
विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, तल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

एड्स एक विश्वव्यापी समस्या
बचाव ही एकमात्र निदान

डॉ. नीरज कुमार गौतम

एड्स एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिशियेंसी के नाम से जाना जाता है, जो एक वायरस है जिसे एच.आई.वी. कहते हैं, जिसके मानव रक्त में प्रवेश कर जाने से एड्स फैलता है। वर्तमान में इस बीमारी से बचाव के लिए न कोई वैक्सीन है और न कोई समुचित इलाज है यह वायरस घातक और खतरनाक होता है क्योंकि यह मानव शरीर में प्रतिरोधक प्रणाली यानी शरीर में रोग से लड़ने की शक्ति को नष्ट कर देता है और शरीर में बिना स्पष्ट लक्षण के वर्षों तक रहता है। यह वायरस विषैले जीवाणु बैक्टीरिया से भी छोटे होते हैं और सूक्ष्मदर्शी यंत्र से भी देखे नहीं जा सकते। एचआईवी संक्रमण से प्रभावित होकर एड्स विकसित होने में आठ से दस वर्ष का समय लगता है। भारत में एड्स महामारी को आए 17 वर्ष से अधिक हुए हैं। इस अल्पावधि में यह बीमारी देश में अत्यधिक गम्भीर स्वास्थ्य समस्या के रूप में उभरी है।

एड्स रोग की पहचान अफ्रीका से हुई थी इसलिए अफ्रीका को एड्स का जनक एवं युगांडा को इसकी राजधानी माना जाता है। इसकी जानकारी एक वैज्ञानिक एलेकजेंडर टेम्पकटन को सन् 1970 में मिली जब वे अफ्रीका में अपने सहयोगी के साथ केपोसीज सारकोमा नामक एक प्रकार के त्वचा कैंसर पर शोध कार्य कर रहे थे। लेकिन रोग की पूरी जानकारी दुनिया को तब हुई जब सन् 1981 में अमेरिका के एक अस्पताल में न्यूमोनिया से पीड़ित समलैंगिक यौन आदतों से ग्रस्त पांच युवा मरीज गम्भीर हालत में भर्ती किए गए। इलाज के दौरान उन पर कई तरह की महंगी दवाईयों का प्रयोग किया लेकिन कोई असर नहीं हुआ तो चिकित्सकों ने उनकी रोग प्रतिरोधक की जांच करवाई। परन्तु इस जांच के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उन युवकों

की प्रतिरोधक क्षमता पूरी तरह से समाप्त हो चुकी थी। इस घटना के बाद चिकित्सा वैज्ञानिकों ने विस्तृत छानबीन की और जानकारी के आधार पर 1982 में इस रोग को एड्स एवं रोग उत्पन्न करने वाले अति सूक्ष्म विषाणु को एच.आई.वी. नाम दिया जो 1/1000 मि.मि. व्यास का एक गोलाकार विषाणु है जो दो लिपिड झिल्लियों का बना होता है, इसमें दो प्रकार के ग्लाइको प्रोटीन तथा दो प्रकार के प्रोटीन स्तर होते हैं। इसका पहली बार नामकरण प्रो. ल्यूक मोन्टा ग्रेसियर एवं डी.सी. गैली ने किया।

भारत में एच.आई.वी./एड्स महामारी को 17 वर्ष से अधिक हुए हैं। इस अल्पावधि में यह बीमारी देश में अत्यधिक गम्भीर स्वास्थ्य समस्या के रूप में उभरी है। एच.आई.वी./एड्स के प्रारम्भिक मामले मुम्बई तथा चेन्नई के व्यावसायिक यौन कार्यकर्ताओं तथा मणिपुर जैसे उत्तर–पूर्वी राज्य में नशीली दवाओं के उपयोग कर्ताओं में पाए गए। बाद में यह बीमारी तेजी से आसपास के क्षेत्र में फैल गयी।

एड्स के स्रोत

वैज्ञानिकों के अनुसार एच.आई.वी. एड्स मुख्यतः चार स्रोतों से फैलता है :–

- संक्रमित साथी से असुरक्षित यौन सम्बन्ध से।
- एच.आई.वी. संक्रमणयुक्त रक्त शरीर में प्रवेश कराने से ।
- संक्रमित सुई या सिरिंजों से दवा चढ़ाने से।
- संक्रमित मां से गर्भस्थ शिशु में।

एड्स के लक्षण

- शरीर में 10 प्रतिशत से अधिक वजन की कमी।
- एक माह से अधिक अवधि तक लगातार अथवा रुक–रुक कर आने वाला बुखार ।
- एक माह से अधिक अवधि तक लगातार दस्त अथवा रुक–रुक कर दस्त।
- एक माह से अधिक अवधि तक लगातार खांसी ।
- बार–बार हरपीज का होना।
- ओरो फेरेन्जियल कॉन्डीडायसिसि (मुंह/गले फफूंद संक्रमण)।
- क्रॉनिक प्रोग्रेसिव एण्ड डिससेमीनेटेड हरपीज सिम्लपेक्स इन्फेक्शन।
- जनरलाइज्ड लिम्फेडेंनोपैथी (लिम्फ ग्रन्थियों की सूजन)।
- सामान्य संक्रमणों का बार–बार होना ।
- आरो फेरिनजियल कैन्डिडायसिसि।

वर्तमान में एच.आई.वी. विश्व में प्रतिदिन 7000 वयस्क व्यक्तियों और 500 बच्चों में फैल रहा है। सन् 1999 के अन्त तक सम्पूर्ण विश्व में तकरीबन 34.4 मिलियन व्यक्ति एड्स से पीड़ित थे। सन् 1999 में 2.8 मिलियन लोगों की मृत्यु इस बीमारी के कारण हुई और वर्ष 2002 में लगभग 5.4 मिलियन लोग इस बीमारी से ग्रसित हुए हैं। अतः इस बीमारी की वजह से अब मरने वालों की संख्या 18.8 मिलियन हो गयी है ।

पिछले कुछ वर्षों में विकसित देशों में एड्स के प्रभावी इलाज तथा इससे बचने की सावधानी की वजह से विकसित देशों में इससे मरने वालों की संख्या में कमी आई है। इसके विपरीत विकासशील देशों में यह बीमारी तथा इससे मरने वाले व्यक्तियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। दक्षिणी–पूर्वी एशियाई देशों में एच.आई.वी. इन्फेक्शन से प्रभावित लोगों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। इस बीमारी ने भारत, म्यांमार, थाईलैण्ड, कम्बोडिया आदि देशों में भयंकर रूप धारण कर लिया है। अतः स्वास्थ्य विभाग के सामने यह रोग गम्भीर चुनौती के रूप में है। 1984 में थाईलैण्ड पहला ऐसा देश था जहां पर पहले एड्स के मरीज की पहचान की गई थी। अन्य देशों में इस बीमारी की किसी भी तरह की जानकारी नहीं थी। इसके उपरान्त इस रोग से ग्रसित रोगियों की संख्या में लगातार वृद्धि होने लगी।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार इस वक्त दक्षिण–पूर्वी एशियाई क्षेत्र में करीब 5 मिलियन व्यक्ति इस रोग से ग्रसित हैं जोकि सम्पूर्ण विश्व का 15 प्रतिशत है। यह रोग अब सामान्य व्यक्तियों में भी बढ़ रहा है। इन क्षेत्रीय आंकड़ों पर अगर हम ध्यान दें तो पता चलता है कि करीब 91 प्रतिशत एड्स मरीज 15–49 वर्ष की आयु समूह में अधिक पाए जाते हैं। तथा पुरुषों में यह रोग महिलाओं की तुलना में 4 गुना अधिक पाया जाता है। एड्स के फैलने का सबसे प्रमुख कारण उन्मुक्त यौनाचार 85 प्रतिशत हैं जबकि इन्जेक्शन के द्वारा 7 प्रतिशत और माताओं से बच्चों में फैलने के मामले करीब 5 प्रतिशत दर्ज किए गए।

भारत में वर्ष 2007 दिसम्बर तक 20,408 एड्स के मामले आए जिसमें से 87.4 प्रतिशत में यौन क्रियाओं के माध्यम से इस संक्रमण ने प्रवेश किया है और 4.7 प्रतिशत में जन्म के समय का संक्रमण उत्तरदायी है। संक्रमण के लगभग 1.8 प्रतिशत मामले इंजेक्शन लगाने तथा 1.7 प्रतिशत दूषित रक्त उत्पादों के उपयोग किए जाने से हुए हैं। एड्स अनुसंधान एवं नियंत्रण केन्द्र, पुणे का मत है कि मुम्बई की लाल बत्ती क्षेत्र की वैश्याएं ही केवल प्रति घंटा 3 या 5 एच.आई.वी संक्रमित मामले उत्पन्न करती हैं। निम्नलिखित से एच.आई.वी. नहीं फैलता :

- संक्रमित रोगी के द्वारा उपयोग किए जाने वाले बर्तनों से पानी पीना अथवा भोजन करना।
- उन तरण–तालों का प्रयोग करना जिनका एच.आई.वी./एड्स के रोगी प्रयोग करते हैं।
- संक्रमित व्यक्ति के साथ रहने से ।
- एच.आई.वी./एड्स संक्रमित व्यक्ति की देखभाल अथवा सेवा करने से ।
- उस मच्छर के काटने से जिसने संक्रमित व्यक्ति को पहले काटा हो ।
- एच.आई. वी./एड्स रोगी से हाथ मिलाने से ।
- संक्रमित व्यक्ति के पास बैठने से, खांसने अथवा छींकने से, पानी, भोजन, कपड़े , प्याले, ग्लास, प्लेट, कांटे, चम्मच तथा अन्य सांझे की वस्तु के संपर्क से।

- संक्रमित व्यक्ति के टेलीफोन के प्रयोग से ।
- संसार के उन क्षेत्रों से जहां एड्स हैं, उनके साहित्य को प्राप्त करने अथवा पढ़ने से ।
- रक्तदान करने से।
- संक्रमित व्यक्तियों के साथ काम करने से।

एड्स रोग के प्रभाव

इस जीवनकाल और शायद उसके बाद में भी इस सार्वदेशिक व्याधि के दुष्प्रभावों का अनुमान लगाना कठिन है। प्रारम्भ में जो बीमारी कुछ समलैंगिकों तक ही सीमित दिखाई देती थी उसी ने एक दशक में सम्पूर्ण विश्व में लाखों स्त्री –पुरुषों और बच्चों को अपने शिकंजे में कस लिया । एड्स कोई स्वास्थ्य संबंधी समस्या मात्र नहीं है बल्कि यह तो सामाजिक समस्या है जिसके सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पक्ष होते हैं। यह मूल सामाजिक संस्थाओं के लिए वैयक्तिक, पारिवारिक और सामुदायिक स्तर पर खतरा है। इसके आर्थिक परिणाम भी गंभीर होते हैं क्योंकि स्वास्थ्य पर राष्ट्र का आधा व्यय तक एड्स की रोकथाम में ही लग सकता है यदि एड्स के रोगियों की आवश्यकताओं को पूरा किया जाने लगे। एड्स विशेष तरीके से लोगों के आर्थिक और सामाजिक रूप से उत्पादनशील वर्षों में आक्रमण करता है जबकि वे दूसरों की देखभाल और परवरिश के लिए उत्तरदायी होते हैं परिणामस्वरूप जब धनार्जन करने वाले मर जाते हैं, वे परिवार को जीवनयापन के साधनों से विहीन छोड़ जाते हैं। इस प्रकार एच.आई.वी. संक्रमण से प्रभावित लोग न केवल प्रारम्भ में संवेगात्मक आघात से और बाद में सामाजिकता से, अलगाव और अंत में एक या दो वर्षों तक शारीरिक समस्याओं से पीड़ित होते हैं, बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी वे बर्बाद हो जाते हैं। एड्स पीड़ित लोग अपने धंधे से हाथ धो बैठते हैं। अपने परिवारजनों व समुदाय से अलग कर दिए जाते हैं और मित्रों द्वारा अस्वीकार कर दिए जाते हैं। डाक्टरों द्वारा इलाज करने से अस्वीकार कर दिए जाते हैं। स्कूलों विश्वविद्यालयों से बहिष्कृत हो जाते हैं। यहां तक कि अपमानित भी होते हैं। उनके परिवारों को भी आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से कष्ट उठाना पड़ता है। युवा और विवाहित एड्स रोगियों की पत्नियां विधवापन भोगती हैं और बच्चे अनाथ हो जाते हैं। इस प्रकार एच.आई.वी. और एड्स के असंख्य दुष्प्रभाव होते हैं।

एड्स रोग बचाव

सार्वभौमिक रूप से एच.आई.वी का कोई प्रभावशाली उपचार उपलब्ध नहीं है, और विकासशील देशों के लिए अथवा उसकी पहुंच के अन्दर कोई बचाव वैक्सिन न तो उपलब्ध है न निकट भविष्य में उपलब्ध होने की संभावना है चूंकि एड्स यौन संक्रमित रोग है अतएव इसके संचार में अवरोध उत्पन्न करने के लिए यौन आचरण पर ध्यान केंद्रित करना होगा। इसलिए सभी पुरुषों तथा महिलाओं, जिनमें किशोर भी सम्मिलित हैं के लिए जानकारी तथा शिक्षा कार्यक्रम महत्वपूर्ण हैं विशेषकर उन लोगों के लिए जिन्हें एच.आई.वी के संक्रमण का अधिक खतरा है। साथ ही अन्य यौन–संक्रमित रोगों की जांच और उपचार की भी आवश्यकता है तथा इसके लिए ऐसा वातावरण तैयार किया जाना चाहिए जिनसे स्पष्ट जानकारी को, इस बात का भेदभाव किए बिना कि यह व्यक्ति एच.आई.वी/एड्स का रोगी है अथवा रोगी होने की संभावना है लोगों तक पहुंचाया जाए। दक्षिण–पूर्वी एशिया क्षेत्रों के देशों की भांति हमारे देश में भी यौन संक्रमण से तुरन्त बचाव किया जाना सर्वोच्च प्राथमिकता होगी। एड्स और एच.आई.वी संक्रमण को रोकने और बचाव के लिए कुछ उपाय व सुझाव निम्नलिखित हैं :–

- एड्स में संक्रमित लोगों के साथ यौनाचार सर्वाधिक खतरनाक है, इसलिए सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि लोगों को कन्डोम व यौन सहयोगियों की अधिक संख्या से बचाव के द्वारा सुरक्षित यौनाचार के लिए शिक्षा दी जाए।
- टी.वी. रेडियो, समाचार पत्र व अन्य साधनों से प्रचार किया जा सकता है।
- शैक्षिक संस्थाओं में भी कोर्स सामग्री के माध्यम से आवश्यक जागृति पैदा की जा सकती है। लोगों को आवश्यक ज्ञान प्रदान कराने के लिए एड्स परामर्श समिति भी स्थापित की जा सकती है। आवश्यक जानकारी प्रदान कराने के लिए समय–समय पर सेमिनार, सिम्पोजियम और कार्यशालाएं भी आयोजित की जा सकती हैं।
- डाक्टरों और नर्सों के लिए भी कुछ प्रशिक्षण की आवश्यकता है ताकि वे एड्स और एच.आई.वी संक्रमण के कुछ लक्षणों की जानकारी रोगियों को दे सकें ।
- रक्त या रक्त उत्पादन शरीर में चढ़ाए जाने से पूर्व का परीक्षण किया जाना चाहिए।
- एच.आई.वी परीक्षण उन लोगों के लिए निःशुल्क और गुप्त होना चाहिए जो अति जोखिम वाले क्रियाकलापों में शामिल होते हैं और जो स्वयं भी जानना चाहते हो कि वे स्वयं एच.आई.वी. संक्रमित हैं या नहीं और जिन्हें एच.आई.वी. संक्रमण की ठीक से सूक्ष्म जांच के बिना ही रक्त चढ़ा दिया जाता है। परन्तु निदान के लिए परीक्षण की राह में अनेक नैतिक समस्याएं आती हैं। क्या एच.आई.वी जोखिम वाले व्यक्तियों को परीक्षण के लिए प्रोत्साहित किया जाए? इस प्रकार प्रोत्साहन कितना शक्तिशाली हो? जिनका परीक्षण किया जाये उन्हें परामर्श किस प्रकार दिया जाए? क्या परीक्षण परिणाम गुप्त रखे जा सकते हैं और रखे जाने चाहिए ? मान लिया जाए कि एक गर्भवती महिला परीक्षण के लिए आती है और एच.आई.वी. संक्रमण से प्रभावित पाई जाती है। क्या उसको गर्भपात के लिए बाध्य किया जाए या उसको अपना गर्भ जारी रखने की अनुमति दी जा सकती है। क्योंकि अध्ययन ने दर्शाया है कि मां से बच्चे में एच.आई.वी संवाहन की 25 प्रतिशत से 50 प्रतिशत सम्भावना है। इस प्रकार की समस्याएं बहुत दुविधा पैदा कर देती हैं जिन्हें सरलता से सुलझाया नहीं जा सकता है। इन विषयों पर विचार के बाद शीघ्र ही नीति निर्धारण की आवश्यकता है।

- डॉक्टरों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इन्जेक्शन लगाने के साधन अच्छी तरह संक्रमण रहित कर लिए गए हैं।
- लाल बत्ती क्षेत्रों में वेश्याओं को कन्डोम या तो निःशुल्क या सस्ती दर पर उपलब्ध कराए जाने चाहिए ।
- नशीले पदार्थों के सेवनकर्ताओं को नसों में इन्जेक्शन लगाने से बचने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।
- स्वैच्छिक संगठनों को नवीन विधियों और सामुदायिक सम्पर्क विधि से विभिन्न संक्रमणशील समूहों को एड्स की जानकारी का प्रचार–प्रसार करना चाहिए।

स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

एच.आई.वी संक्रमण से युक्त या वर्षों से एड्स से पीड़ित रोगियों को जिस प्रकार के बड़े पैमाने पर किए जाने वाले कार्य की आवश्यकता है उसकी केवल अकेले सरकार से अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह समस्त कार्यक्रमों को स्वयं करें । स्वैच्छिक संगठनों को व्यवहार परिवर्तन के कार्यक्रमों में शामिल करना पड़ेगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी इसकी आवश्यकता पर बल दिया है। लेकिन वर्तमान में ऐसा प्रतीत होता है कि स्वैच्छिक संगठन स्वयं को एड्स को रोकने के प्रयासों में सहयोग करने के लिए या तो इच्छुक नहीं है या फिर स्वयं को असमर्थ समझते हैं। यह जानते हुए कि एच.आई.वी संक्रमण अपर्याप्त स्वास्थ्य की देखभाल, महिलाओं की पराधीनता, अशिक्षा, निर्धनता और ऐसी ही परम्परागत समस्याओं से उत्पन्न होता है, स्वैच्छिक संगठन निश्चय ही इन सामाजिक यथार्थों से स्वयं को जोड़ सकते हैं। एच.आई.वी संक्रमण के प्रति लोगों की संवेदनशीलता को प्रभावित करने वाले सामाजिक कारकों पर ध्यान केंद्रित करते हुए स्वैच्छिक संगठन इस बीमारी द्वारा ग्रस्त हो जाने के भय से त्रस्त लोगों को सूचना, सेवा और अन्य सामाजिक सहयोग प्रदान कर सकते हैं। संक्रमण लगने के पूर्व भी सामुदायिक स्तर पर कार्य करने वाला सामाजिक कार्यकर्ता एच.आई.वी. संक्रमण के फैलने के विषय में जानकारी प्रदान कर सकता है।

श्यामला नटराज (1992–48) ने एक उदाहरण दिया है। यह भली–भांति मान्य तथ्य है कि महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा एच.आई.वी संक्रमण के लिए अधिक ग्राह्य हैं। इसका कारण चिकित्सकीय न होकर सामाजिक वातावरण में निहित है जो वास्तविकता में इस ग्राह्यता को प्रोत्साहन देता है। एक वेश्या को ही ले लिया जाए । वह अपने ग्राहकों से सावधानी के उपाय अपनाने के लिए नहीं कह सकती। स्वैच्छिक संगठनों द्वारा ऐसी महिलाओं को सुरक्षित यौनाचार की जानकारी दिए जाने से ऐसा वातावरण बनेगा जिससे इन महिलाओं के लिए विकल्प खुलेंगे और वे उसी प्रकार कार्य कर सकेंगी। स्वैच्छिक संगठनों की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि वे लोगों को ऐसे संवेदनशील लोगों की भागीदारी को रोकने और प्रेरित करने की कितनी सामर्थ्य रखते हैं। वायरस से संक्रमित होने के बाद मनोवैज्ञानिक और सामाजिक समर्थन की आवश्यकता उतनी ही महत्वपूर्ण हैं जितनी कि चिकित्सकीय और गैर–सरकारी संगठन इन सेवाओं को भली–भांति प्रदान कर सकते हैं। जब लाखों लोग एक बीमारी से पीड़ित हों तब चिकित्सकीय प्रणाली पर पूर्ण निर्भरता असफल होगी। साथ–साथ यह भी आवश्यक है कि समुदाय भी बीमारों की देखभाल में सम्मिलित हो और समुदाय के भीतर ही संसाधन खोजे जाएं। इस प्रकार की सहायता के लिए स्वैच्छिक संगठन इस ओर वास्तविक प्रयास कर सकते हैं। बीमारों की सहायता करने के अलावा वे बीमारों के बच्चों, परिवार और अन्य आश्रित लोगों की मदद कर सकते हैं जो एकाकीपन और भेदभाव के शिकार हो जाते हैं।

वर्तमान में एड्स नियंत्रण के लिए शासन के स्तर पर केन्द्र तथा राज्य सरकारें विश्व स्वास्थ्य संगठन, सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठनों द्वारा विभिन्न एड्स नियंत्रण कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। भारत सरकार ने राष्ट्रीय एड्स कमेटी की स्थापना 1986 में करके इस कार्यक्रम का आरम्भ किया था जिसमें प्रत्येक प्रदेश में जिला–स्तर पर, तहसील–स्तर पर विभिन्न एड्स नियंत्रण समिति के द्वारा एडस से बचाव एवं जागरुकता कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया जा रहा है। परन्तु आज भी ग्राम–स्तर पर इन कार्यक्रमों का संचालन प्रभावी रूप से नहीं हो सका है। अतः एक प्रभावी योजना इस प्रकार बनाई जाए ताकि प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति को जागरूक किया जा सके। साथ ही राष्ट्रीय चैनल के माध्यम से, निजी जनसंचार चैनलों के माध्यम से एड्स से संबंधित कार्यक्रमों की जानकारी आम व्यक्ति तक पहुंचाई जाए जिससे प्रत्येक व्यक्ति के मन में व्याप्त भय एवं भ्रम का वातावरण दूर हो सके। तभी हम एड्स से भावी पीढ़ियों को मुक्त कर सकेंगे।

(लेखक शासकीय स्वशासी उत्कृष्टता कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) के अर्थशास्त्र विभाग में अतिथि विद्वान हैं।)
ई–मेल : neeraj_gautam76@yahoo.co.in

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

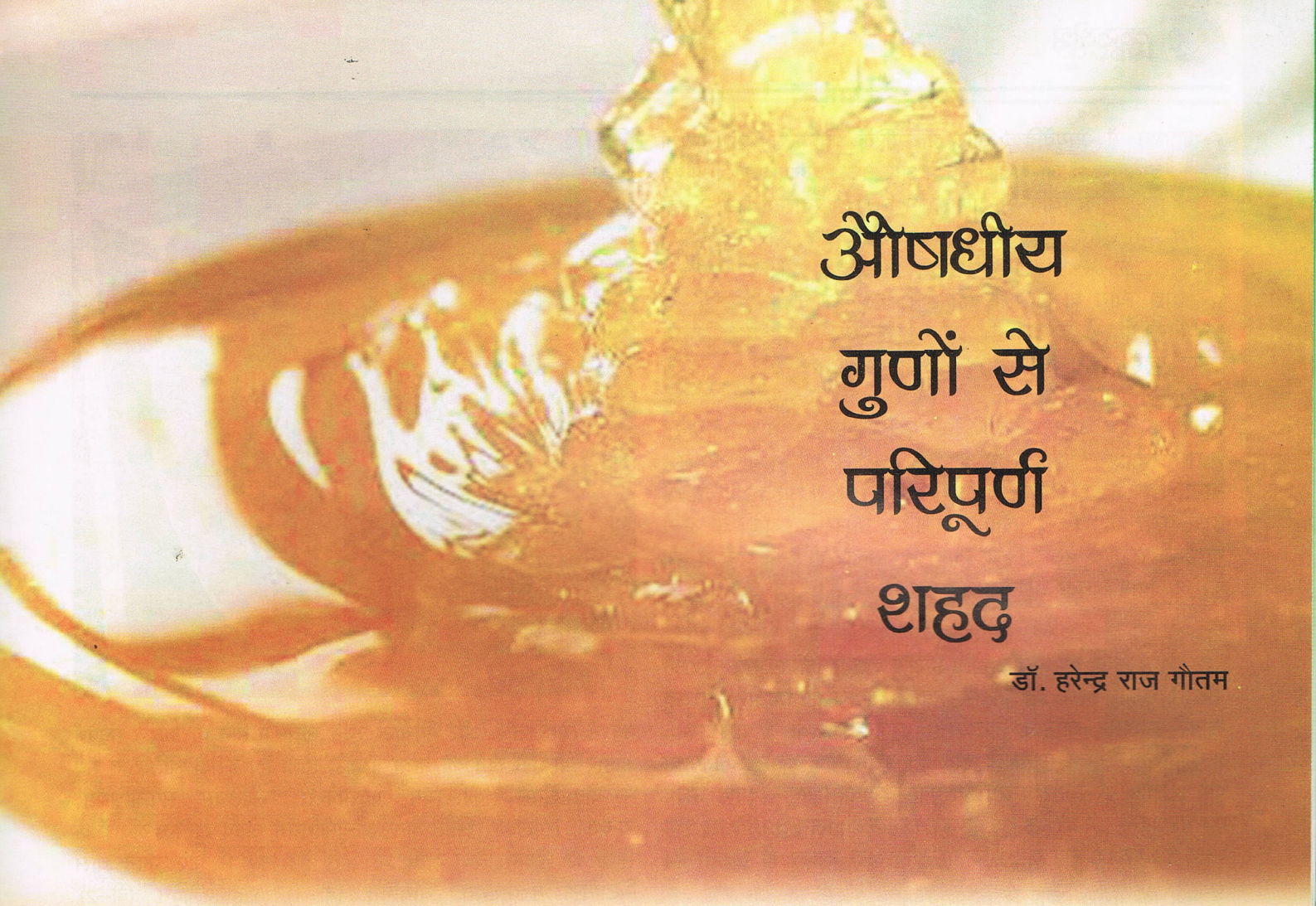

औषधीय गुणों से परिपूर्ण शहद

डॉ. हरेन्द्र राज गौतम

शहद या मधु प्रकृति की एक अमूल्य देन है जिसका विभिन्न औषधियों में प्रयोग होता है तथा मधु अपने आप में भी औषधीय गुणों से परिपूर्ण है। मधु में विटामिनों की मात्रा उसमें एकत्र पराग कणों की मात्रा के अनुसार निर्भर होती है। मधु में विद्यमान औषधीय गुणों का वर्णन शुरू से ही आयुर्वेद और पारम्परिक चिकित्सा में रहा है लेकिन हाल ही में हुए अनुसंधानों से मधु में विद्यमान अनूठे जीवाणुनाशक गुणों का पता चलता है। मधु के प्रयोग से हम शरीर पर हुए घावों तक का उपचार कर सकते हैं और जीवाणुविरोधक दवाओं 'ऐन्टिबॉयोटिक्स' के उपयोग से भी बच सकते हैं। मधु में विद्यमान 'हाइड्रोजन परऑक्साइड' एक ऐसा रसायन है जिसमें घावों को रोगाणुरहित करने की क्षमता है। विभिन्न प्रकार के पौधों के फूलों और प्रयोग से एकत्रित मधु की गुणवत्ता भिन्न-भिन्न होती है। मधु का खूनशोधक, ठंड, खांसी, बुखार अवरोधक के रूप में, आंखों की जलन रोकने में तथा जीभ व गले के छालों को रोकने में भी प्रयोग किया जाता है। मधु में विद्यमान 'एन्जाइमज़' के कारण यह विकृत पाचनक्रिया को भी ठीक करता है।

भारत में आयुर्वेदिक और पारम्परिक चिकित्सा का पुराना इतिहास है जो जड़ी–बूटियों और घरेलू पदार्थों पर आधारित रहा है। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली ने निसंदेह स्वास्थ्य क्षेत्र में एक क्रान्ति का सूत्रपात किया है लेकिन आयुर्वेदिक और पारम्परिक चिकित्सा की प्रासंगिकता कभी कम नहीं हुई है और इस प्रणाली का कोई पर्याय या विकल्प नहीं हो सकता है। जड़ी–बूटियों और प्राकृतिक पदार्थों पर आधारित इस चिकित्सा प्रणाली में शरीर के ऊपर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है। आयुर्वेदिक और पारम्परिक चिकित्सा प्रणालियों में प्रयोग होने वाले पदार्थों में शहद या मधु भी प्रकृति की एक अमूल्य देन है जो विभिन्न औषधियों में प्रयोग होता है तथा मधु अपने आप में भी औषधीय गुणों से परिपूर्ण है। मधु एक मीठा, चिपचिपाहट वाला तरल पदार्थ होता है जो मधुमक्खियों द्वारा पौधों के मकरन्द कोषों से स्त्रावित मधुरस या पौधों के अन्य भागों के स्त्राव से तैयार किया जाता है। संसार के सभी धर्मों ने मधु की लाजवाब अनूठी गुणवत्ता की प्रशंसा की है।

मधु के गुण

मधु में ऊर्जा का भण्डार होता है और एक किलोग्राम मधु में 3000 कैलोरी ऊर्जा होती है। इसमें मुख्यतः शर्करा ही होती है परन्तु कार्बनिक अम्ल, खनिज, विटामिन, 'एन्जाइम' तथा जीवाणुनाशक तत्व भी कुछ मात्रा में मौजूद होते हैं। इसमें मौजूद ठोस की मात्रा पुष्पण स्त्रोत पर निर्भर करती है। एक किलोग्राम मधु से प्राप्त ऊर्जा का मूल्यांकन करें तो यह 65 अण्डों, 13 कि.ग्रा. प्लम, 19 कि.ग्रा. हरी मटर, 12 कि.ग्रा. सेब व 20 कि.ग्रा. गाजर के बराबर हो सकती है।

मधु में लोहा, तांबा और मैंगनीज सूक्ष्म मात्रा में होने के कारण मधुपूर्ण आहार खाने से खून की मात्रा में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त मधु में 'पोटाशियम', 'कैल्शियम', फॉस्फोरस', 'सोडियम', मैगनीशियम', 'गन्धक', 'सिलिका', 'सिलिकोन', अल्यूमीनियम' आदि खनिज लवणों के साथ 17 सूक्ष्ममात्रिक तत्व भी होते हैं। मधु में पाए जाने वाले विटामिनों में मुख्यतः 'थायमिन' (बी–1), 'राइबोफ्लेविन' (बी–2), 'निकोटिन', 'फोलिक एसिड', विटामिन के, बायोटिन, 'पायरी डोक्सीन', 'पैन्टोथैनिक एसिड', 'एसकॉर्बिक एसिड' तथा कैरोटीन प्रमुख रूप में विद्यमान होते हैं। मधु में विटामिनों की मात्रा उसमें एकत्र पराग कणों की मात्रा के अनुसार निर्भर होती है। मधु में भिन्न–भिन्न प्रकार के लगभग 18 अमीनो एसिड पाए जाते हैं। इनमें से 10 अमीनो एसिड भारत में भी पाये जाते हैं। मधु में पाए जाने वाले 'एन्जाइम्स' में 'इनवरटेज' और 'डाआस्टेज' प्रमुख हैं। 'इनवरटेज' जहां 'सुक्रोज' शर्करा को साधारण शर्करा में बदलता है वहीं 'डाआस्टेज' स्टार्च को 'डेक्साट्रिन' में बदलता है और पाचन क्रिया में भी सहायक है।

मधु के औषधीय गुण

मधु में विद्यमान औषधीय गुणों का वर्णन शुरू से ही आयुर्वेद और पारम्परिक चिकित्सा में रहा है लेकिन हाल ही में हुए अनुसंधानों से मधु में विद्यमान अनूठे जीवाणुनाशक गुणों का पता चलता है। मधु के प्रयोग से हम शरीर पर हुए घावों तक का उपचार कर सकते हैं और जीवाणुविरोधक दवाओं 'ऐन्टिबॉयोटिक्स' के उपयोग से भी बच सकते हैं। सन् 2000 में आस्ट्रेलिया के मैलबर्न शहर में हुए पहले विश्व घाव उपचार सम्मेलन में मधु में विद्यमान जीवाणु विरोधक गुणों से सम्बन्धित उत्साहवर्धक परिणामों पर चर्चा हुई। वैज्ञानिक अनुसंधानों से ये ज्ञात हुआ है कि मधु में मनुष्य में बहुत से रोगों को जन्म देने वाले बैक्टीरिया को रोकने

की क्षमता है जिनमें 'एसचैरिसिया कोलाई', 'सालमोनैला', 'सट्रैप्टोकोकस पायोजीनस', 'हैलिकोबैक्टर पइलोरी', 'हैलिकोबैक्टर' की अन्य प्रजातियां और मैथिसिलिन रोधक 'एटेफाइलोकोकस औरियस' जैसे घातक बैक्टीरिया प्रमुख हैं। मधु की जीवाणु विरोधक दवाओं के विरुद्ध रोधक जीवाणुओं को रोकने की क्षमता ने इसे दवाओं की मुख्यधारा में ला खड़ा किया है।

मधु में विद्यमान जीवाणु विरोधक गुण कई रसायनों के कारण हैं। मधु की प्रवृत्ति अम्लीय होना भी एक कारण है। जहां मधुमक्खियों में विद्यमान 'ग्लूकोज ऑक्सीडोज़ एन्जाइम' मधु को अम्लीय यानी 'एसिडिक' बना देता है जो जीवाणुओं की बढ़ोत्तरी में बाधक हैं। लेकिन मधु में छुपा सबसे घातक जीवाणुनाशक तत्व 'हाइड्रोजन पर ऑक्साइड' है जो मधु में कम मात्रा में पाया जाता है। मधु में विद्यमान 'हाइड्रोजन परऑक्साइड' एक ऐसा रसायन है जिसमें घावों को रोगाणुरहित करने की क्षमता है और शुरू में इसका उपयोग चिकित्सालयों में भी किया जाता था, लेकिन शरीर की कोशिकाओं में इस रसायन की अधिक मात्रा से होने वाले दुष्प्रभाव को ध्यान में रखते हुए बाद में इसका उपयोग रोक दिया गया। मधु में इसका कोई दुष्प्रभाव भी नहीं पड़ता है। विभिन्न प्रकार के पौधों के फूलों और प्रयोग से एकत्रित मधु की गुणवत्ता भिन्न–भिन्न होती है। न्यूजीलैंड में चाय की झाड़ियों और आस्ट्रेलिया में जैली झाड़ी जो एक चाय का ही पेड़ है, से एकत्रित मधु में बहुत ही असाधारण गुण देखने को मिले हैं।

दवाइयों की आयुर्वेदिक और पारम्परिक पद्धति में मधु का बहुत अधिक प्रयोग किया गया है। मधु का एक चम्मच खाली पेट हर दिन खाने से अंतड़ियों में होने वाले फोड़ों से आराम मिलता है क्योंकि हाल में हुये अनुसंधानों से ये ज्ञात हुआ है कि इस रोग के रोगकारक हैलिकोबैक्टर को मधु प्रभावी ढंग से रोकता है। मधु का प्रयोग खूनशोधक, ठंड, खांसी, बुखार अवरोधक के रूप में, आंखों की जलन रोकने में तथा जीभ व गले के छालों को रोकने में भी प्रयोग किया जाता है। मधु का प्रयोग इसमें विद्यमान 'एन्जाइमज़' के कारण विकृत पाचनक्रिया को भी ठीक करता है। मधु के प्रयोग से 'सट्रैप्टोकोकस पायोजीनज़' बैक्टीरिया को प्रभावशाली ढंग से

शहद की पैकिंग

रोका जा सकता है। इसलिए इस बैक्टीरिया द्वारा होने वाले रोगों जैसे खांसी, गला खराब होना, गुर्दों की सूजन और उससे होने वाले बुखार जैसे रोगों से भी आराम मिलता है। इसलिए मधु का नींबू के रस के साथ उपयोग गले की खांसी में आराम देता है।

मधु में घावों को दवाओं की अपेक्षा ठीक करने की क्षमता इसलिए अधिक है क्योंकि दवाओं की तुलना में मधु का शरीर की कोशिकाओं पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है और मधु के उपयोग से घाव के आसपास इस तरह का नम वातावरण निर्मित होता है जिससे दर्द नहीं होता है और दवाइयों की पट्टियों को बदलते समय होने वाले कोशिकाओं के नुकसान से भी बचा जा सकता है। किशमिश, काली मिर्च और मधु का मिश्रण बनाकर चाटने से शुष्क खांसी का इलाज होता है। अदरक का रस तथा मधु से तैयार काढ़े को 24 घंटे में 3 से 4 बार प्रयोग करने से टांसिल का उपचार होता है। मोटापे को दूर करने के लिए प्रतिदिन मधु खाने से या प्रातः काल एक गिलास पानी में नींबू के साथ दो तीन चम्मच मधु लेने से बहुत लाभ मिलता है। दो भाग मधु, एक भाग लहसुन तथा आधा भाग अदरक लें। लहसुन और अदरक को साफ करके पीस लें और इनका फालतू पानी हल्की धूप में सुखा लें। इस सूखे हुए मिश्रण को मधु के साथ मिलाकर एक से दो चम्मच प्रतिदिन प्रातः काल खाएं। यह एक उत्तम शाक्तिदायक एवं पेट के विकारों को दूर करने वाली दवा का काम करता है। इसके अतिरिक्त और भी बहुत–सी आयुर्वेदिक दवाएं हैं जिनका प्रयोग मधु के साथ किया जाता है।

भारतवर्ष में अभी भी औसत प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष मधु की खपत लगभग 5 ग्राम होती है जबकि अमेरिका में 500 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष खपत होती है। हमारे देश में मधु को अभी भी दवाई के रूप में ही प्रयोग किया जाता है तथा ऊर्जादायक आहार के रूप में इसकी खपत नहीं है। मधु का उपयोग व्यक्ति की आयु और स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। एक बच्चे के लिए 10 से 15 ग्राम और बूढ़े व्यक्ति के लिए 20 से 30 ग्राम मधु की मात्रा प्रतिदिन लेना उचित है।

(लेखक डॉ. यशवंत सिंह परमार प्रौद्यागिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन में कवक एवं पादप रोग विज्ञान विभाग में वैज्ञानिक हैं।)

मधुमेह रोगियों के लिए वरदान : चीनी तुलसी

विनोद कुमार यादव

"आज देश में कई बीमारियां अपने पैर पसार रही हैं। यदि हम अपने खानपान में कुछ शाक पत्तियां शामिल कर ले तो ये औषधि के साथ-साथ स्वाद को भी तरोताजा बनाए रखती हैं। ऐसी एक वनस्पति चीनी तुलसी (स्टीविया) है, जो मधुमेह से पीड़ित व्यक्तियों के लिए शर्करा का उत्तम स्रोत है। स्टीविया मूलरूप से दक्षिण अमेरिका के पेरूग्वे देश का पौधा है। स्टीविया की लगभग 80 प्रतिशत खेती चीन में होती है तथा जापान इसके लिए दुनिया का सबसे बड़ा बाजार है। वर्तमान में भारत के विभिन्न राज्यों जैसे कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा उत्तरांचल के विभिन्न भागों में इसकी खेती प्रारम्भ हो चुकी है। भारत में स्टीविया की खेती को लोकप्रिय बनाने की दिशा में हिमालय जैव सम्पदा प्रौद्योगिकी संस्थान पालमपुर, हिमाचल प्रदेश एवं केंद्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सीमैप), लखनऊ महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। सरकारी संस्थानों के साथ-साथ कुछ निजी कम्पनियां जैसे सनफ्रुट्स लिमिटेड, पूना जिसे स्टीविया की उन्नतशील प्रजातियां विकसित करने का श्रेय प्राप्त है, सम्पूर्ण मानव समाज को स्वस्थ बनाने के लिए प्रयासरत है।"

मनुष्य ईश्वर की सर्वोत्तम कृति है। इसका विकास अशिक्षा, गरीबी के साथ–साथ अस्वस्थ शरीर से अधिक अवरूद्ध होता है। स्वस्थ बने रहने के लिए या फिर बीमारी से निजात पाने के लिए व्यायाम, खानपान या औषधि का सहारा लेना पड़ता है। आज देश में कई बीमारियां अपने पैर पसार रही हैं। यदि हम अपने खानपान में कुछ शाक पत्तियां शामिल कर लें तो ये औषधि के साथ–साथ, स्वाद को भी तरोताजा बनाए रखती हैं। ऐसी एक वनस्पति जिसका नाम स्टीविया है जो मधुमेह से पीड़ित व्यक्तियों के लिए शर्करा का उत्तम स्रोत है। देश में 25 से 45 वर्ष के आयु समूह के 15 प्रतिशत व्यक्ति मधुमेह से पीड़ित हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2008 के अंत तक मधुमेह रोगियों की संख्या 5.7 करोड़ तक पहुंच जाएगी। इस भयावह स्थिति को देखते हुए विभिन्न शून्य कैलोरी स्वीटहर्ब हमारे खानपान का आवश्यक अंग बन चुके हैं, जोकि पूर्णतया सुरक्षित नहीं हैं? इसी कड़ी में एक आश्चर्यजनक पौधा उभरकर सामने आया है, जिसे हम स्टीविया रेवॉडियाना कहते हैं। ऐस्टरेसी परिवार के इस पौधे के कई उपनाम भी हैं। जैसे–चीनी तुलसी, मधुपत्र, मधुरशाक, हीम लीफ।

स्टीविया से बनी चीनी

स्टीविया मूलरूप से दक्षिण अमेरिका के पेरूग्वे देश का पौधा है। पेरूग्वे के पश्चात इसका विस्तार ताइवान, अमेरिका, ब्राजील, जापान, चीन तथा दक्षिण–पूर्व एशिया के देशों में हुआ। स्टीविया की लगभग 80 प्रतिशत खेती चीन में होती है तथा जापान इसके लिए दुनिया का सबसे बड़ा बाजार है। वर्तमान में भारत के विभिन्न राज्यों जैसे कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा उत्तरांचल के विभिन्न भागों में इसकी खेती प्रारम्भ हो चुकी है। भारत में स्टीविया की खेती को लोकप्रिय बनाने की दिशा में हिमालय जैव सम्पदा प्रौद्योगिकी संस्थान पालमपुर, हिमाचल प्रदेश एवं केंद्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सीमैप) लखनऊ महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। सरकारी संस्थानों के साथ–साथ कुछ निजी कम्पनियों जैसे सनफ्रुट्स लिमिटेड, पूना जिसे स्टीविया की उन्नतशील प्रजातियां विकसित करने का श्रेय प्राप्त है। सम्पूर्ण मानव समाज को स्वस्थ बनाने के लिए प्रयासरत है।

स्टीविया की खेती

जैविक विशेषता

अमेरिकी वैज्ञानिक डॉ. हेविट जी. फ्लेचर ने सर्वप्रथम स्टीविया की पत्तियों से स्टीवियोसाइड नामक यौगिक निकाला एवं जापानियों ने इस यौगिक की उपयोगिता को संसार के सम्मुख रखा। यह यौगिक पेनिक्रियाज की बीटा कोशिकाओं पर अपना प्रभाव डालकर उन्हें इन्सुलिन तैयार करने में मदद करता है। इसी वजह से यह मधुमेह रोगियों के लिए रामबाण सिद्ध हो रहा है। स्टीविया की पत्तियों में स्टीवियोसाइड की मात्रा 6–20 प्रतिशत पायी जाती है जोकि सुक्रोज से 200–300 गुना ज्यादा मीठा होता है। जबकि स्टीविया की पत्तियां आम शक्कर से 20–30 गुना ज्यादा मीठी एवं पूर्णतया कैलोरीरहित होती हैं। स्टीवियोसाइड के अतिरिक्त इसकी पत्तियों में बाउदिस, रीवाउदिसाइड–सी, डुकोसाइड के अतिरिक्त छः अन्य यौगिक भी पाए जाते हैं जोकि त्वचा के कैंसर, कैण्डीसाइसिस, दंतमंजन, घाव भरने तथा रक्तचाप को नियंत्रि करने में मुख्य भूमि निभाते हैं।

जलवायु एवं मृदा

स्टीविया भारत में खेती के लिए अपेक्षाकृत

नया पौधा है। इसे उपोष्ण कटिबंधीय, शिवालिका क्षेत्र एवं हिमालय की तलहटियों में और मध्य भारत के मैदानी शीतोष्ण क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है। यह पौधा ज्यादा ठंडी एवं ज्यादा गर्म (10^0C से नीचे तथा 10^0C से ऊपर) जलवायु सहन नहीं कर सकता है। अतः पौधों को तेज गर्मी से बचाने के लिए इसकी रोपाई मक्का अथवा रतनजोत (जेट्रोफा) आदि पौधों के बीच में करना अधिक लाभकारी सिद्ध होता है। वार्षिक वर्षा 100–140 सेमी० तथा 65 से 85 प्रतिशत आर्द्रता होने पर इस फसल की पैदावार अच्छी होती है। स्टीविया फसल की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें पाले का दुष्प्रभाव पड़ने के बावजूद भी बसन्त के मौसम में जड़ों से पुनः कल्ले निकल आते हैं। प्रायः रेतीली दोमट तथा लाल मिट्टी जिनका पी.एच. 6 से 7.5 के बीच हो, इसकी खेती के लिए उपयुक्त होती है।

उन्नतशील प्रजातियां

विश्व भर में स्टीविया की लगभग 90 प्रजातियां विकसित की गई हैं। परन्तु हमें ऐसी प्रजाति का चुनाव करना चाहिए जिसमें स्टीवियोसाइड्स की मात्रा ज्यादा हो तथा जो अपने क्षेत्र की जलवायु के भी अनुरूप हो। वर्तमान में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से स्टीविया की मुख्यतः तीन प्रजातियां खेती के लिए उपयुक्त हैं।

- एस.आर.बी. 128–वैज्ञानिक दृष्टिकोण से स्टीविया की यह सर्वोत्तम किस्म मानी जाती है। इसमें 21 प्रतिशत ग्लूकोसाइड्स पाया जाता है। यह प्रजाति सम्पूर्ण भारत के लिए उपयुक्त है। इस प्रजाति का विकास सनफ्रुट्स लि०, पूना द्वारा किया गया है।
- एस.आर.बी. 512–इस प्रजाति में 9 से 12 प्रतिशत ग्लुकोसाइड्स पाया जाता है। यह प्रजाति भारत के उत्तरी राज्यों के लिए उपयुक्त है तथा वर्ष में इसकी चार कटिंग ली जा सकती हैं।
- एस.आर.बी. 123–इस किस्म में ग्लुकोसाइड्स की मात्रा 9–12 प्रतिशत पायी जाती है तथा यह भारत के दक्षिणी पठारी क्षेत्रों के लिए ज्यादा उपयुक्त है। इस प्रजाति की एक वर्ष में पांच कटिंग ली जा सकती हैं।

प्रवर्धन विधिः मुख्यतः स्टीविया के पौधों का प्रवर्धन तीन विधियों से किया जाता है।

- वनस्पतिक विधि (कटिंग द्वारा),
- बीज द्वारा
- ऊत्तक प्रवर्धन विधि

पौधों के शीर्ष तनों के कलम द्वारा पौध तैयार करने का उपयुक्त समय अगस्त से अक्टूबर के मध्य होता है। वनस्पतिक विधि से 10–15 से.मी. ऊंची एवं 4–6 गांठों वाली कलमों की जोकि परिपक्व पौधों से ली गई हो, को बसन्त ऋतु के आरम्भ में 15 x 15 से.मी. की दूरी पर आंशिक छाया एवं उच्च आर्द्रता में लगा देना चाहिए। कलम का कम से कम आधा भाग भूमि के अन्दर होना चाहिए। इसमें प्रतिदिन फव्वारे से सिंचाई करने पर 10–15 दिनों में जड़ें निकल आती हैं। इस विधि से तैयार पौधे अधिक सहनशील होते हैं। इसलिए इसे सबसे ज्यादा सफल विधि माना गया है। परन्तु इस विधि से पौध बनाने में खर्चा अधिक लगता हैं। स्टीविया के बीज बहुत बारीक होते हैं। अतः बीज से पौध बनाने के लिए प्लगट्रे अथवा जमीनेटिना ट्रे का प्रयोग करना चाहिए या फिर 1.25 x 10.0 मी. की क्यारी बनाकर फरवरी–मार्च के महीने में बीज की बुवाई कर देनी चाहिए। यदि आप ट्रे में बुवाई कर रहे हैं तो बीज बोने के पश्चात इसे 6–10 सप्ताह के लिए पाली ग्रीन हाऊस के अन्दर रख देना चाहिए ताकि जमाव अच्छा हो सके। इस विधि से तैयार 5–7 पत्तों वाली एवं 8–10 सेंमी. ऊंची पौध रोपाई के लिए अच्छी मानी जाती है। लघु क्षेत्र में उत्पादन करने के लिए क्लोनल विधि से तैयार पौध बहुत ही व्यावहारिक सिद्ध होती है। परन्तु क्लोनल विधि से तैयार पौध किसी अच्छे शोध संस्थान से ही लेनी चाहिए। जहां पर पौध तैयार करने में उचित मानकों का पालन किया गया हो।

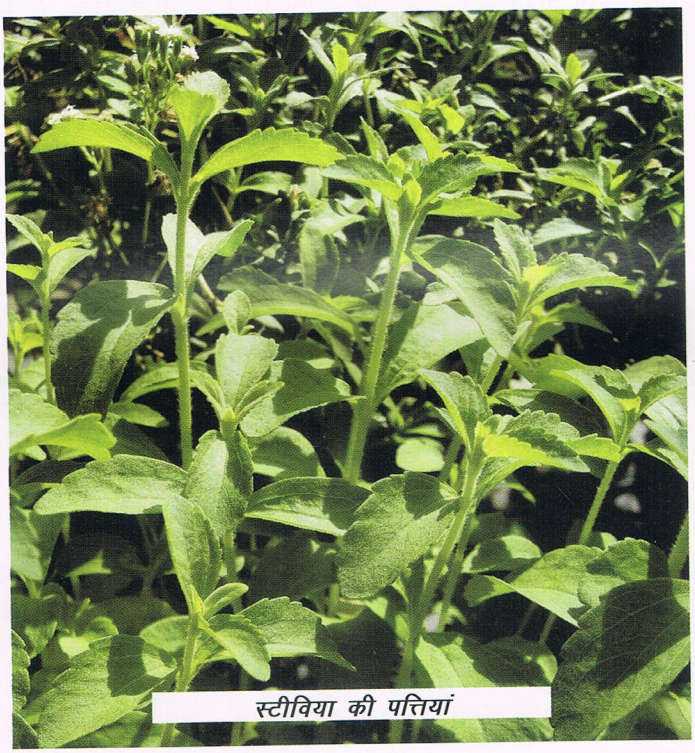

स्टीविया की पत्तियां

खेत की तैयारी, रोपण विधि एवं समय

स्टीविया की खेती एक पंचवर्षीय फसल के रूप में की जाती है। अतः इसके लिए सर्वप्रथम खेत की अच्छी प्रकार गहरी जुताई करके खेत में 5 टन केंचुए की खाद (वर्मी कम्पोस्ट), 3 टन जैविक खाद प्रति हेक्टेयर के हिसाब से अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए। इसके साथ ही भूमिजनित रोग एवं कीटों से बचाव के लिए 3–4 टन प्रति हेक्टेयर की दर से पिसी हुई खली भी खेत में मिला देना लाभकारी होगा।

स्टीविया की रोपाई मेड़ों पर करना ज्यादा लाभकारी होता है ताकि जलभराव की स्थिति में भी जड़ों का विकास अच्छा हो सके। इस दृष्टि से खेत में 1 से 1.5 फुट ऊंची, 2 फुट चौड़ी मेड़े बना ली जाती हैं। इन मेड़ों पर पौध से पौध की दूरी 20–45 से.मी. एवं लाइन से लाइन की दूरी 40–60 से.मी. रखते हुए स्टीविया की रोपाई जलवायु एवं प्रजाति के अनुसार सितम्बर से नवम्बर तथा फरवरी से अप्रैल तक की जाती है। सामान्यतः 70,000–80,000 पौध प्रति हेक्टेयर अच्छी उपज देने के लिए पर्याप्त होती हैं।

स्टीविया के फूल

खांद, पानी एवं अन्य पोषक तत्व

सामान्यतः स्टीविया को 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 45 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर दर से आवश्यकता होती है। फास्फोरस एवं पोटाश रोपाई के पूर्व मृदा में डालकर अच्छी तरह मिलाना चाहिए। सूक्ष्म तत्वों में बोरान तथा मैंगनीज का पर्णीय छिड़काव उपयुक्त रहता है। स्टीविया एक नमी प्रिय पौधा है इसीलिए इसमें साल भर समय–समय पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इसके पौधों को ड्रिप विधि से सिंचित करना ज्यादा उचित पाया गया ताकि पौधों पर बीमारियों के प्रकोप की सम्भावना को न्यूनतम किया जा सके।

बीमारियां एवं रोकथाम

सामान्यतः स्टीविया पर रोग का प्रकोप कम ही होता है। कभी–कभी मृदा में बोरान तत्व की कमी के कारण लीफ स्पॉट का प्रकोप हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए 6 प्रतिशत बोरेक्स छिड़काव करना चाहिए। वैसे निश्चित अन्तरालों पर नीम के तेल अथवा गोमूत्र का प्रयोग करने से फसल पूर्णतया कीटों अथवा रोगों से मुक्त रहती है। स्टीविया को मानव सीधे अपने प्रयोग में लाता है इसलिए किसी भी रसायन को अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करना मानवीय दृष्टिकोण से अच्छा नहीं होगा।

मधुर शाक की कटाई

रोपाई के चार माह के बाद स्टीविया में फूल आने के पूर्व पहली कटाई कर लेनी चाहिए क्योंकि फूल आने के बाद पत्तियों में उपस्थित आवश्यक तत्वों का क्षरण होने लगता है। अन्य कटाई 3–3 माह के अन्तराल पर करनी चाहिए।

प्रोसेसिंग एवं पैकिंग

पौध की कटाई के उपरान्त इसकी पत्तियों को तोड़कर 3–4 दिन तक छाया में सुखाना चाहिए। सुखाने के लिए ड्राइंग बेगन का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। साफ–सुथरी सूखी हुई पत्तियों को प्लास्टिक की पैकिंग में प्लास्टिक लाइन कार्ड, बोर्ड बाक्स, में सील कर लेबल लगाकर विपणन करें।

उपज एवं आय

एक बहुवर्षीय फसल होने के कारण स्टीविया से प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ वर्षों में क्रमशः 1.7, 2.0, 2.3 और 2.5 टन पत्ते प्राप्त किये जा सकते हैं जिसका उत्पादन खर्च चार सालों में लगभग 5 लाख रुपये प्रति हेक्टेयर आता है। स्टीविया के पत्तों की बिक्री इसमें उपस्थित स्टीवयोसाइड्स की मात्रा के आधार पर 80–200 रुपये प्रति किलोग्राम के हिसाब से की जा सकती है। औसतन 120 रुपये प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से बेचने पर प्रति हेक्टेयर 10.2 लाख रुपये सकल आय अथवा 1.3 लाख रुपये प्रति वर्ष के हिसाब से शुद्ध आय प्राप्त की जा सकती है।

स्टीविया की विपणन एवं पौध सामग्री की व्यवस्था

देश की कई प्रमुख कम्पनियां इसे पुनः खरीद आधार पर प्रोत्साहित कर रही है जैसे एस.एच. केलकर एण्ड कम्पनी मुम्बई, ग्रोमोर बायोटेक लि० चेन्नई तथा सन् फ्रुटस प्रा. लि. पुणे, जिन्हें इसकी बिक्री हेतु सम्पर्क किया जा सकता है। इसी प्रकार पौध सामग्री की प्राप्ति के लिए आई.एच.बी.टी. पालमपुर, हनुमान को. आ. सोसायटी, पाषण–सुस रोड, पुणे (महाराष्ट्र) 411021 से सम्पर्क किया जा सकता है। निकट भविष्य में, केंद्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान, लखनऊ भी इसकी गुणवत्तायुक्त पौध का उत्पादन प्रारम्भ कर देगा।

जिस प्रकार वर्तमान में चीनी की आपूर्ति के लिए जगह–जगह गन्ने की मिलें लगी हुई हैं, उसी प्रकार भविष्य में स्टीविया प्रसंस्करण की इकाइयां (उन मध्य पर्वतीय क्षेत्रों में जहां पर न तो गन्ने की खेती सुगमता से की जा सकती है न ही चीनी मिलें हैं) लगी नजर आएंगी और हमारे किसान भाई अपनी स्टीविया की पत्तियों को इन इकाईयों में बेचकर अधिकाधिक लाभ अर्जित कर सकेंगे।

(लेखक, केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सीमैप) लखनऊ में "वरिष्ठ शोध अध्येता" हैं)
ई–मेल : vinodkumarydv@gmail.com

पुष्पकृषि अवसरों का रंगीला गुलदस्ता

आर.बी.एल. गर्ग

समूची दुनिया में पुष्प व्यापार 70 अरब डॉलर है। 2002 में भारत ने मात्र 115 करोड़ रूपये के पुष्प निर्यात किए थे जो 2005 में बढ़कर 210 करोड़ रूपये और 2007 में 300 करोड़ को पार कर गए। अब तक पुष्प कृषि पर पश्चिमी देशों का ही आधिपत्य रहा है, लेकिन पिछले दशक में पारम्परिक पुष्प कृषि राष्ट्र जैसे हॉलैण्ड, कोलम्बिया, इजराइल, केन्या व इटली के अतिरिक्त, जिम्बाब्वे, तंजानिया, नाइजीरिया तथा दक्षिण अफ्रीका, भारत आदि देशों के पुष्प कृषि में प्रवेश होने के फलस्वरूप इस क्षेत्र में किंचित प्रतियोगिता का आभास होने लगा है। हॉलैण्ड पुष्प व्यापार की दृष्टि से अभी भी शीर्ष पर है, जो पुष्पों के समूचे विश्व व्यापार का 60 प्रतिशत से अधिक भाग पर नियंत्रण किए हुए है। भारत में पुष्प कृषि शैशवावस्था में है लेकिन इसमें एक उपयोगी व्यवसाय बनने की प्रबल क्षमता है जो न केवल रोजगार अवसरों का विस्तार करेगा अपितु बहुमूल्य विदेशी विनिमय भी अर्जित करेगा।

मानव का पुष्पों से रिश्ता सनातन है–अवसर आह्लाद का हो या अवसाद का, पूजा–पाठ का हो या प्रेम प्रसंग का। जापानी इकेबाना भी एक इसी प्रकार की अभिव्यक्ति है और मातम पर पुष्पांजलि अन्य प्रकार की। यहां तक कि पुष्प का खाद्य पदार्थ के रूप में भी प्रयोग किया जाता रहा है और आज भी होता है। लेकिन समय के परिवर्तन के साथ मनुष्य का फूलों से रिश्ता और अधिक गहरा होता जा रहा है जिसे व्यावसायिक स्तर पर पुष्प कृषि के रूप में देखा जा सकता है। भारत में बंगलौर, पुणे व हैदराबाद तीन प्रमुख कृषि क्षेत्र हैं जो देश के कुल पुष्प उत्पादन के 60 प्रतिशत अंश के लिए उत्तरदायी हैं। समूची दुनिया में पुष्प व्यापार 70 अरब डॉलर है। 2002 में भारत में मात्र 115 करोड़ रुपये के पुष्प निर्यात किए थे जो 2005 में बढ़कर 210 करोड़ रुपये और 2007 में 300 करोड़ को पार कर गए।

अब तक पुष्प कृषि पर पश्चिमी देशों का ही आधिपत्य रहा है, लेकिन पिछले दशक में पारम्परिक पुष्प कृषि राष्ट्र जैसे हॉलैण्ड, कोलम्बिया, इजराइल, केन्या व इटली के अतिरिक्त, जिम्बाब्वे, तंजानिया, नाइजीरिया तथा दक्षिण अफ्रीका, भारत आदि देशों के पुष्प कृषि में प्रवेश होने के फलस्वरूप इस क्षेत्र में किंचित प्रतियोगिता का आभास होने लगा है। हॉलैंड पुष्प व्यापार की दृष्टि से अभी भी शीर्ष पर है, जो पुष्पों के समूचे विश्व व्यापार का 60 प्रतिशत से अधिक भाग पर नियंत्रण किए हुए हैं। भारत में आर्थिक सुधार कार्यक्रम के अंतर्गत पुष्प कृषि को महत्वपूर्ण क्षेत्र घोषित किए जाने के बाद पुष्प कृषि के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है। आज पश्चिम बंगाल, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा व हिमाचल प्रदेश में भी पुष्पकृषि अब व्यावसायिक स्तर पर की जाने लगी है।

भारत में पुष्प कृषि शैशवावस्था में है, लेकिन इसमें एक उपयोगी व्यवसाय बनने की प्रबल क्षमता है जो न केवल रोजगार अवसरों का विस्तार करेगा अपितु बहुमूल्य विदेशी विनिमय भी अर्जित करेगा। एक दशक पहले भारत में व्यावसायिक स्तर पर पुष्प कृषि के बारे में कल्पना नहीं की जा सकती थी, तब पुष्प निर्यात शून्य स्तर पर था। पिछले दशक में पुष्प कृषि ने अपनी व्यावसायिक पहचान दर्ज की है, जिसका कारण न केवल बढ़ती जा रही आंतरिक मांग है अपितु इसका विदेशी बाजारों में प्रवेश भी है। जिस तरह बधाई–पत्रों की किस्म व स्वरूप में परिवर्तन आ रहा है उसी गति से पुष्पों की मांग भी बढ़ रही है। दिलचस्प बात यह है कि फूलों का खाद्य पदार्थ के रूप में उनके स्वाद, रंग और खुशबू के कारण प्रयोग का पुनरुत्थान हो रहा है। फूलों का खाद्य पदार्थ के रूप में प्रयोग का इतिहास चीन, ग्रीस व रोम की सभ्यताओं से संबंधित है। सभी फूल खाद्य योग्य नहीं होते। खाद्य फूल में प्रमुख– लिली, गेंदा–गुलाब कंदपुष्प हैं। कैलन्डुला की पीत पंखुड़ी चाय सूप व अंडे निर्मित खाद्य में अद्भुत महक देती है। गुलाब की महक युक्त पंखुड़ियों के गुलाब जल व गुलाब सिरप–यहां तक कि चाय में भी प्रयुक्त होती है।

पिछले एक दशक में अकेले दिल्ली में शत–प्रतिशत मांग बढ़ी है, जहां भारतीय फूलों के अलावा विदेशी पुष्प भी लोकप्रिय हो रहे हैं। दीपावली, वेलन्टाइन डे तथा अन्य मांगलिक अवसरों (जैसे विवाह) पर पुष्पों की मांग सबसे अधिक होती है। उसमें आर्किड, पैराडाइस, लिली, ट्यूलिप, ग्लेडिया, मैरी–गोल्ड प्रेशिया, एन्थूरियम, गरबेरा, लकी बाम्बे आदि प्रजाति के फूल व गुलदस्ते कनाट पैलेस ही क्या दिल्ली के महत्वपूर्ण केंद्रों में अपनी छठा बिखेरते देखे जा सकते हैं, अक्टूबर से फरवरी के बीच दिल्ली में फूलों का दो करोड़ रुपये से अधिक का प्रतिदिन व्यापार हो जाता है। दिल्ली आज भारत का सबसे बड़ा पुष्प व्यापारिक केंद्र बन चुका है। दिल्ली सरकार यहां एक विशाल पुष्प मण्डी बना रही

गुलाब की खेती

है, जहां काफी दुकानों के अलावा पुष्प व्यापारी थोक व फुटकर भी स्थापित किए जाएंगे।

विश्व का पुष्प बाजार मुख्यतः ताजा पुष्प, सजीव पौधे व कन्द बल्व तक केंद्रित है जिसमें प्रमुख स्थान ताजा फूलों का है। विश्व में प्रमुख पुष्प उत्पादक राष्ट्र कोलम्बिया, इटली और इजराइल हैं, लेकिन अब धीरे–धीरे अन्य देश भी इस क्षेत्र में प्रवेश कर रहे हैं जैसे भारत, जिम्बाब्वे तंजानिया, इक्वेडर, केन्या। भारत में संगठित और असंगठित क्षेत्र में पुष्प कृषि की लगभग 60 इकाईयां स्थापित हो चुकी हैं। संगठित क्षेत्र में लगभग 500 हेक्टेयर तथा असंगठित क्षेत्र में 30,000 हेक्टेयर भूमि पर पुष्प कृषि की जा रही है। आंतरिक मांग की पूर्ति मूलतः असंगठित क्षेत्र की इकाईयां कर रही हैं, जबकि निर्यात मांग की पूर्ति संगठित क्षेत्र की ग्रीन हाउस इकाईयां कर रही हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि विनियोग बढ़ने के साथ पुष्प उत्पादन भी बढ़ा है और निर्यात भी।

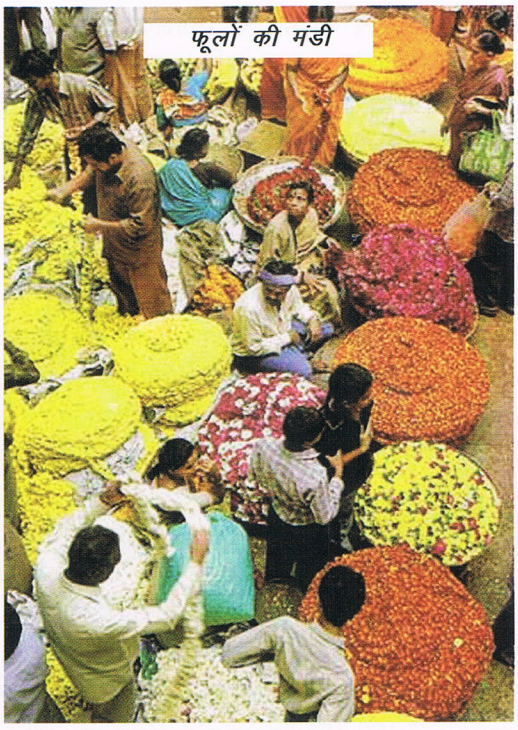

फूलों की मंडी

वर्ष 2001–02 में पुष्प निर्यातों का मूल्य 115 करोड़ था जो 2007–08 में 300 करोड़ रुपये को पार कर गया। पुष्प कृषि के लिए भारत के पास कुछ प्रकृति प्रदत्त सुविधाएं हैं जैसे यहां श्रम सस्ता है तथा पुष्प कृषि के लिय पर्याप्त भूमि भी है। यहां पुष्प कृषि के लिए जलवायु भी अनुकूलतम है। सरकार द्वारा नई निर्यातोन्मुख पुष्प उत्पादन इकाईयों पर आयकर छूट के अलावा संबंधित उपकरणों के आयातों पर छूट भी देती है। इन सभी लाभों को देखते हुए भारत पुष्प विश्व व्यापार में अपना विशिष्ट स्थान रखने की क्षमता रखता है। पुष्पों के विदेशी व्यापार की दृष्टि से हमें कुछ भौगोलिक लाभ भी हासिल हैं। भारत में स्थित दक्षिण–पूर्वी एशियाई बाजारों यथा जापान, हांगकांग तथा दक्षिण कोरिया की ओर होने के कारण हम निर्यातक के रूप में सुस्थापित हो सकते हैं क्योंकि इन क्षेत्रों में पुष्प उत्पादन की छोटी–छोटी इकाईयां ही कार्यरत हैं।

अंतर्राष्ट्रीय पुष्प व्यापार में भारत का अंश 0.1 प्रतिशत ही है जिनका कारण इस व्यापार से संबंधित कुछ सीमाएं हैं जो हमारे निर्यात व्यापार को प्रभावित करती हैं। इनमें प्रमुख हैं – आधार संरचना की अपर्याप्तता, अपर्याप्त शिक्षा व प्रशिक्षण, अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता, तकनीकी तथा पेशेवर कौशल का अभाव तथा अत्यधिक हवाई भाड़ा।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की दृष्टि से पुष्प उत्पादक से लेकर पुष्प उपभोक्ता की श्रृंखला जितनी बड़ी होगी उतना ही पुष्प गुणवत्ता का ह्रास होगा। चूंकि पुष्प शीघ्र नाशवान है इसलिए जो पुष्प निर्यातक देश भौगोलिक दृष्टि से पुष्प मण्डियों के समीप हैं, उन्हें अच्छा लाभ मिल सकता है। भारत को यह लाभ सीमित मात्रा में ही मिल रहा है क्योंकि इस नीलामी तक के लिए अनेक बिचौलियों को भुगतना पड़ रहा है। भारतीय वाणिज्य मंत्रालय ने हॉलैण्ड में पुष्प विपणन केंद्र स्थापना का निर्णय लिया है, जो सामयिक और उपयोगी है क्योंकि इससे भारतीय पुष्प निर्यातकों की मुश्किल कम होगी। एग्रीकल्चरल प्रॉसेसिंग

एक्सपोर्ट डवलपमेंट एजेंसी ने हवाई अड्डों के पास पुष्पों के लिये शीतायन केंद्र स्थापित किए हैं जो एक उपयोगी कदम है। लेकिन यह मानना होगा कि देश में पुष्प विकास की आधारभूत संरचना लचर बनी हुई है। पुष्प के उचित संसाधन, पैकिंग, संग्रहण तथा परिवहन संबंधी हमारा ज्ञान दुनिया के प्रमुख निर्यातकों की तुलना में कहीं नहीं टिकता, हमारी सड़कें तथा परिवहन साधन भी निम्न स्तर पर ही हैं, यहां तक कि हवाई हड्डों पर भी शीतायन सुविधाएं अपर्याप्त हैं।

भारतीय पुष्प उत्पादकों तथा कृषि विज्ञान संस्थाओं के मध्य अपेक्षित सम्प्रेषण न होने के कारण प्रयोगशालाओं के सफल शोध व तकनीकी उन तक नहीं पहुंच पातें। उत्पादकों का ग्रीन हाउस ज्ञान तथा फसल उगाने के बाद की टेक्नालॉजी के प्रति अनभिज्ञता अपर्याप्त है। इन कमियों को अधिक से अधिक कृषि विज्ञान संस्थाओं के साथ सम्प्रेषण से दूर किया जा सकता है। पुष्प कृषि के बारे में समुचित प्रशिक्षण भी आवश्यक है। किस प्रकार ग्रीन हाउस स्थापित किए जाएं तथा उनकी देखभाल की जाए? किस प्रकार आधुनिक ग्रीन हाउस में उपकरणों का प्रयोग हो? कैसे फसलोपरांत फूलों की पैकिंग हो? आदि ताकि हमारे निर्यात अन्य देशों के निर्यातों से प्रतियोगिता में खरे उतरें।

अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता अन्य महत्वपूर्ण घटक है जो पुष्प के निर्यात व्यापार को प्रभावित कर रहा है। भारत का अन्तर्राष्ट्रीय पुष्प बाजार में प्रवेश तुलनात्मक रूप से नया अनुभव है। भारत के विदेशी व्यापार में सुस्थापित होने की अपरिमित संभावनाओं को देखते हुए कुछ बातों पर सर्वाधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इस दिशा में सारपूर्ण निर्यताधिक्य और पुष्प गुणवत्ता को बनाए रखने के प्रयास अत्यावश्यक हैं। भारत को "अल्प लागत" के लाभों को तकनीकी ज्ञान के अधिकाधिक प्रयोग में लगाना चाहिए। चूंकि पुष्प उत्पादन भारत के उद्यमियों का नया अनुभव है, इसलिए उन्हें अधिक से अधिक ज्ञान अर्जित करने का यत्न करना चाहिए।

(लेखक व्यापार प्रशासन के सेवानिवृत्त प्रोफेसर हैं।)

पाठकों / लेखकों से अनुरोध

आप "कुरुक्षेत्र" पत्रिका के नियमित पाठक/लेखक हैं तो आप जरूर चाहेंगे कि आपके गांव या उसके आसपास आ रहे बदलाव के बारे में सभी लोगों को पता चले। आपके गांव या आसपास जरूर ऐसी कोई महिला/पुरुष या स्वयंसेवी संस्था होगी जिसके बूते पर बदलाव की ब्यार चली हो। सरकारी प्रयासों के चलते भी आपके गांव का कुछ कायापलट तो हुआ ही होगा।

अगर आपके पास ऐसी कोई भी जानकारी है तो आप उसे अपने शब्दों में लिखकर (फोटो सहित) भेजें। लेख छपने पर उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया जाएगा। हमारा पता है – वरिष्ठ संपादक, कुरूक्षेत्र (हिंदी), कमरा नं. 655, 'ए' विंग, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110001, आप हमें लेख ई–मेल भी कर सकते हैं।

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

बीपीएल परिवारों के युवा बने पहरेदार

नौकरी मिलते ही आई खुशहाली

रामचरण धाकड़

वर्षों से गांव में सफाई का काम करने वाले नंदू को सपने में भी आस नहीं थी कि उसका पुत्र राधाकांता एक बड़ी फैक्ट्री में पहरेदारी का काम कर परिवार को 4 हजार रूपये प्रतिमाह का आर्थिक सहयोग देगा। नंदू के इस सपने को पूरा करने में सहायक बनी भारत सरकार की स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना। इस योजना के तहत भरतपुर की एक स्वयंसेवी संस्था द्वारा स्थापित कौशल इंस्टीट्यूट में राधाकांता जैसे करीब 400 युवाओं को अब तक सिक्युरिटी गार्ड का प्रशिक्षण दिलाकर इनमें से लगभग 75 प्रतिशत को विभिन्न कम्पनियों में सिक्युरिटी गार्ड की नौकरी दिलाई जा चुकी है। इस स्वयंसेवी संगठन का सिक्युरिटी गार्ड सहित अन्य व्यवसायों में 6 जिलों के 12 हजार युवकों को रोजगार दिलाने का लक्ष्य है।

भारत सरकार ने 1979 में ग्रामीण बेरोजगार युवाओं को तकनीकी एवं उद्यमिता प्रशिक्षण देकर स्वरोजगार प्रदान करने के लिए ट्राईसेम योजना शुरू की थी लेकिन इसके कोई ठोस परिणाम सामने नहीं आए तो अप्रैल 1999 में आई.आर.डी.पी और ट्राईसेम व अन्य संबधित योजनाओं को मिलाकर एक नई योजना स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार विशेष योजना शुरू की जो अब गरीब लोगों के स्वरोजगार के लिए संचालित योजनाओं में अधिक कारगर सिद्ध हो रही है। श्री वी. सुब्रह्मण्यम की अध्यक्षता में आई एम जी नामक एक समिति गठित की गई जिसने स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के संबध में सुझाव दिया कि यदि बीपीएल गरीब परिवारों के युवाओं को मांग के आधार पर प्रशिक्षण देकर नियोजित कराया जाए तो रोजगार के अवसर अधिक और आसानी से मिल सकते हैं।

स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना में भरतपुर की स्वयंसेवी संस्था लुपिन ह्यूमन वेलफेयर एण्ड रिसर्च फाउण्डेशन को पूर्वी राजस्थान के भरतपुर,धौलपुर,करौली,सवाई माधोपुर, दौसा एवं अलवर जिले के 12 हजार बीपीएल परिवारों के युवाओं को प्रशिक्षण दिलाकर रोजगार प्रदान करने की स्वीकृति प्रदान की गई है जिसमें भरतपुर में दो केन्द्रों पर 3200, करौली, धौलपुर, सवाई माधोपुर, दौसा में एक–एक केन्द्र पर 1600–1600 तथा अलवर जिले के राजगढ़ कस्बे के केन्द्र पर 2400 बीपीएल युवाओं को अलग–अलग बैचों में प्रशिक्षण दिलाना शामिल है।

स्वयंसेवी संस्थान ने बीपीएल युवाओं को प्रशिक्षण के लिए 'कौशल इन्स्टीट्यूट' के संचालन में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त संगठन जॉब जक्शन का सहयोग लिया जिसने बेरोजगार युवाओं को रोजगार से सम्बन्धित ज्ञान के अलावा व्यक्तित्व विकास, विश्व बाजार परिदृश्य आदि का प्रशिक्षण देना शुरू किया है। इन प्रशिक्षण केन्द्रों पर युवाओं को सिक्युरिटी गार्ड, मल्टीपरपज मैकनिक,कम्प्यूटर ऑपरेटर आदि का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था है लेकिन युवाओं का सर्वाधिक आकर्षण सिक्युरिटी गार्ड प्रशिक्षण बना हुआ है। चयनित युवक–युवतियों को 45 दिन का निःशुल्क आवासीय प्रशिक्षण दिया जाता है जिसमें 15 दिनों की ऑन जॉब ट्रेनिंग भी शामिल है जिसमें प्रशिक्षार्थियों को सम्बन्धित कम्पनी में ले जाकर गहन प्रशिक्षण दिलाया जाता है। प्रशिक्षण के मध्य समूह–चर्चा, प्रदर्शन, असाइनमेंट के द्वारा प्रशिक्षार्थियों का मूल्यांकन कर प्रमाणपत्र प्रदान किया जाता है।

प्रवेश निर्धारित प्रक्रिया द्वारा

एस.जी.एस.वाई. योजना के तहत स्थापित कौशल इंस्टीट्यूट प्रशिक्षण केन्द्र में प्रवेश के लिए निर्धारित प्रक्रिया तय की गई है। युवक–युवतियों की रूचि के आधार पर पाठ्यक्रमों में प्रवेश दिया जाता है जिसमें खण्ड विकास अधिकारियों की अध्यक्षता में गठित समिति युवक–युवतियों का चयन करती है। प्रवेश से पहले वजन, लम्बाई, मेडीकल फिटनेस की जांच की जाती है। सिक्युरिटी गार्ड के लिए कक्षा 10 उत्तीर्ण, लम्बाई 170 सेन्टीमीटर, सीने की चौड़ाई 90 सेमी. एवं कम से कम 54 किलो वजन होना चाहिए। इसी तरह अन्य प्रशिक्षणों की योग्यता भी निर्धारित कर दी गई।

आकर्षण बना सिक्युरिटी गार्ड प्रशिक्षण

बीपीएल युवक–युवतियों को मल्टीपरपज मैकनिक,कम्प्यूटर ऑपरेटर एवं अन्य व्यवसायों में स्वयंसेवी संस्था द्वारा स्थापित कौशल इंस्ट्रीयूट में प्रशिक्षण तो दिया जा रहा है लेकिन सिक्युरिटी गार्ड प्रशिक्षण आकर्षण का केन्द्र बन गया है जिसका कारण यह भी है कि इस ट्रेंड के प्रथम बैच को प्रशिक्षण के पश्चात शत–प्रतिशत को गुडगांव की आई.बी.एम. कम्पनी में रोजगार मिल गया है।

सिक्युरिटी गार्ड का प्रशिक्षण अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों को ध्यान में रखकर दिया जा रहा है जिसमें सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक प्रशिक्षण को शामिल किया गया। प्रशिक्षण सेना के सेवानिवृत्त प्रशिक्षकों द्वारा सहायक सामग्री का उपयोग कर दिया जा रहा है। ऐसे उच्चस्तरीय प्रशिक्षण प्राप्त युवाओं के प्लेसमेंट के लिए देश की प्रख्यात कम्पनियों टौप्स, चैकमेट, शीशा ग्रुप, वाल्सन सिक्युरिटी ग्रुप, आई एफएस सर्विसेज औरंगाबाद, आसवानी मैनेजमेंट कंसलटेंसी पूना, सिक्युरिटी इन्वेस्टीगेशन आदि से मांग प्राप्त हो रही है।

बी.पी.एल. परिवारों में आने लगी खुशहाली

जिन बी.पी.एल. परिवारों के युवक सिक्युरिटी गार्ड का प्रशिक्षण कर नियोजित हुए हैं, उन्हें 5 से 6 हजार रुपये प्रतिमाह वेतन, आवास एवं न्यूनतम दर पर भोजन उपलब्ध कराया जा रहा है, जिसके चलते ये युवक अपने वेतन का अधिकांश हिस्सा अपने परिवार को भेज पा रहे हैं जिससे इनके परिवार में खुशहाली आने लगी है। अलवर जिले के रामेश्वर जाटव पिछले तीन माह से 7–7 हजार रुपये अपने परिवार को भिजवा रहे हैं, जिससे उसकी पत्नी ने भैंस खरीद ली है। भैंस की दुग्ध बिक्री से उसके परिवार को अतिरिक्त आमदनी होने लगी है। बी.पी.एल. परिवारों को अब तक खेती के मौसम में अथवा कुछ काम नरेगा योजना में मिलता था। परिवार के एक व्यक्ति के बतौर सिक्युरिटी गार्ड लग जाने से पूरे वर्ष परिवार को आय होने लगी है तथा शेष परिवारजन भैंसपालन, नरेगा आदि में कार्य कर रहे हैं।

अन्य प्रशिक्षण बने स्वरोजगारपरक

कौशल इन्स्टीट्यूट में मल्टीपरपज मैकेनिक एवं कम्प्यूटर प्रशिक्षण स्वरोजगार कार्यों के लिए अधिक उपयोगी हो रहे हैं। मल्टीपरपज मैकेनिक प्रशिक्षण में बी.पी.एल. परिवारों के दसवीं कक्षा

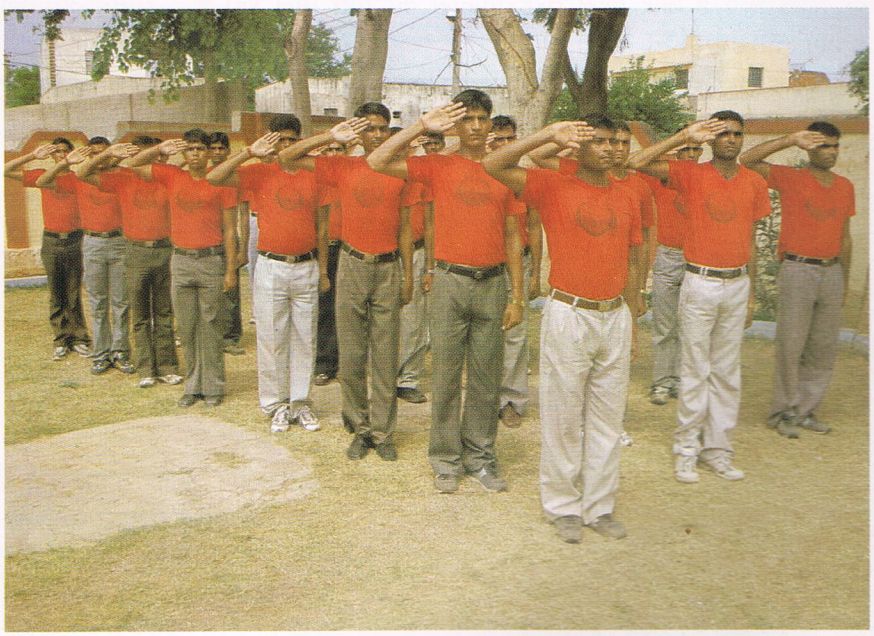

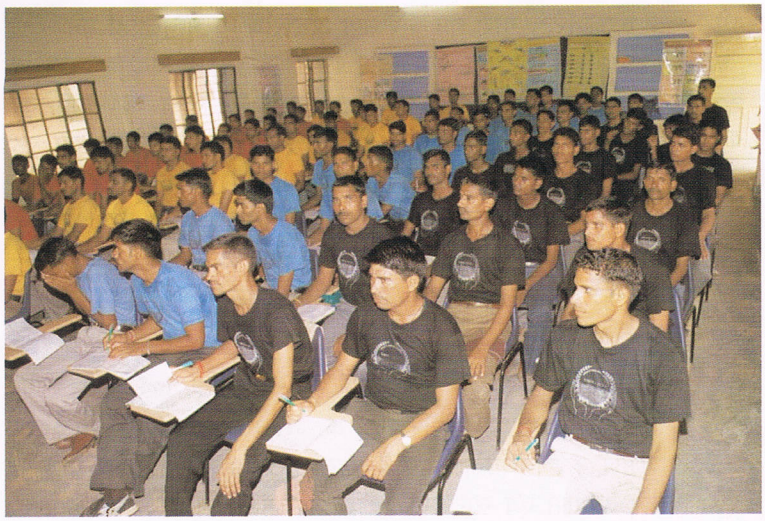

उत्तीर्ण युवाओं को मोटर वाइण्डिंग, मोटर मरम्मत, लेथ मशीन, डीजल मैकेनिक आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है। निर्धारित प्रशिक्षण केन्द्रों पर 45 दिन का आवासीय प्रशिक्षण प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक विधियों द्वारा दिया जाता है। इस प्रशिक्षण के बाद युवाओं को बड़े औद्योगिक संस्थानों की मैकेनिक शाखा में ऑन जॉब प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई है। इन प्रशिक्षणार्थियों को इतना पारंगत कर दिया जाता है कि औद्योगिक संस्थान में सामान्य मोटर या बिजली सम्बन्धित समस्याओं का तुरन्त निराकरण करने में सक्षम होते हैं।

इसके अलावा इस प्रशिक्षण के पश्चात अपना स्वयं का मरम्मत केंद्र स्थापित करने में सक्षम हो जाते हैं। इन्हें प्रशिक्षण के पश्चात संस्था प्रमाणपत्र प्रदान करती है जिसके आधार पर प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम के तहत् ऋण व अनुदान प्राप्त किया जा सकता है। महानगरों में तो मल्टीपरपज मैकेनिकों की भारी मांग है और जिस तरह विकास को गति मिल रही है, इनकी मांग दिनोंदिन बढ़ती जाएगी।

कम्प्यूटर प्रशिक्षण के प्रति महिलाओं का अधिक लगाव देखा गया है। प्रशिक्षण के लिए आवेदन करने वालों में करीब 30 प्रतिशत महिला या छात्राएं हैं, जिन्होंने विभिन्न कारणों से कक्षा 10 उत्तीर्ण करने के बाद बीच में ही प्रशिक्षण छोड़ दिया। कम्प्यूटर का प्रशिक्षण भी अलग–अलग बैचों में दिया जा रहा है जिसमें प्रत्येक बैच में 50 को शामिल किया गया है। इन्हें 45 दिन का आवासीय प्रशिक्षण दिया जा रहा है जिसमें आवास, भोजन एवं प्रशिक्षण की निःशुल्क व्यवस्था है। कम्प्यूटर प्रशिक्षण में अकाउंटिंग, डी.टी.पी., टैली, टाइपिंग, कम्प्यूटर डिजाइनिंग आदि का गहन प्रशिक्षण दिया जाता है।

इन्स्टीट्यूट की वेबसाइट

संस्था की कौशल इन्स्टीट्यूट की वेबसाइट का पता है– www.lupinkaushal.org जिसमें प्रशिक्षणार्थियों के नाम व पते, प्रशिक्षण प्राप्त कर रोजगार पर गए युवाओं की सूची आदि की जानकारी उपलब्ध है। इसके अलावा प्रशिक्षण सम्बन्धित एक डॉक्यूमेंटरी फिल्म भी बनाई गई है जिसे ग्रामीण क्षेत्रों में युवाओं को दिखाकर उन्हें इस योजना के उद्देश्यों, प्रशिक्षण स्थलों, रोजगार की सम्भावना आदि की जानकारी दी जा सकती है।

राज्य के अन्य बेरोजगार युवाओं को भी इसी तरह के बाजार की मांग पर आधारित गहन प्रशिक्षण दिलाकर रोजगार उपलब्ध कराया जाए तो निश्चय ही बेरोजगारी की समस्या से काफी हद तक निजात मिल सकेगी। इसके साथ ही स्थानीय उपलब्धता एवं आवश्यकता के आधार पर स्वरोजगार परक पाठ्यक्रम संचालित कराए जाएं और प्रशिक्षण के बाद युवाओं को सिडबी से एवं महिलाओं को राष्ट्रीय महिला कोष से वित्तीय प्रबन्ध की व्यवस्था करा दी जाए तो निश्चय ही स्वरोजगार कार्यक्रमों के बेहतर परिणाम सामने आ सकते हैं।

(लेखक सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, भरतपुर में कार्यरत हैं।)

सदस्यता कूपन

मैं/हम का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : **कुरुक्षेत्र** एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

जीरो टिलेज तकनीक से गेहूं उत्पादन

एच.एस. भदौरिया

देश में खाद्यान्न के संबंध में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में धान-गेहूं सघन फसल प्रणाली का महत्वपूर्ण योगदान है। धान एवं गेहूं का फसल चक्र के अंतर्गत लगभग 105 लाख हेक्टेयर क्षेत्र आता है। भारत में गेहूं एक मुख्य फसल है। धान-गेहूं फसल चक्र में पानी व लागत की बढ़ती मांग को ध्यान में रखते हुए संसाधन संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। खरीफ फसलों की कटाई के बाद फसल अवशेषों को खेत में जलाने से मृदा में लाभ की जगह नुकसान ही होता है एवं प्रदूषण भी होता है। विशेषतः धान आधारित फसल चक्र में धान की अधिक उपज वाली देर से बोई गई किस्मों के बाद रबी फसल लेने में भी देरी हो जाती है। जीरो टिलेज पद्धति में फसल अवशेषों का अधिकांश भाग मृदा सतह पर छोड़ दिया जाता है जिससे फसल उत्पादन में सुधार होता है। अतः ऐसी परिस्थितियों में जीरो टिलेज तकनीक द्वारा रबी फसलों अनाज, दलहन एवं तिलहन की बुआई समय व संसाधन बचाते हुए की जा सकती है। वर्तमान समय में ऊर्जा संकट एवं बढ़ती हुई फसल लागत को कम करने में जीरो टिलेज तकनीक बहुत लाभदायक है।

आज किसानों को ऊर्जा संकट, विशेष आर्थिक क्षेत्र, कृषि मदों की बढ़ती कीमतें और ग्लोबल वार्मिंग जैसी गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। ये समस्याएं स्वतः ही विभिन्न समस्याओं को जन्म देती है। पिछले चार दशकों में खेती में बहुत सी समस्याएं आई हैं। इन समस्याओं को कम करने के लिए भारत अब दूसरी हरित क्रांति की ओर अग्रसर है। जीरो टिलेज तकनीक का गेहूं की खेती में लागत कम करने और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान आधुनिक खेती में संरक्षित टिलेज पर जोर दिया जा रहा है जिसमें फसल अवशेषों का अधिकांश भाग मृदा सतह पर छोड़ दिया जाता है। इससे न केवल फसल उत्पादकता में सुधार होता है बल्कि धान–गेहूं फसल प्रणाली में निवेश उपयोग दक्षता भी बढ़ती है। जीरो टिलेज टिकाऊ खेती की एक पद्धति है।

धान की फसल की कटाई के उपरांत उसी खेत में बिना कोई जुताई किए हुए जीरो सीड ड्रिल (जिससे उर्वरक एवं बीज एक साथ प्रयोग किए जा सकते हैं) द्वारा गेहूं बुवाई करने को शून्य कर्षण तकनीक कहते है। इस तकनीक की सहायता से खेत की तैयारी पर होने वाली लागत की बचत एवं समय से गेहूं की बुवाई सुनिश्चित की जा सकती है। फलस्वरूप उत्पादन लागत में काफी कमी लायी जा सकती है।

यह तकनीक कृषि जलवायु परिस्थितियों के लिए विशेष रूप से लाभप्रद है–

- जहां की मृदा बनावट में हल्की, उत्तम जल निकास, न्यून जलधारण क्षमता, उच्च निःछालन दर तथा खरपतवारों की समस्या से ग्रस्त है। जहां पर प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन के परिणामस्वरूप उच्च उत्पादन स्तर को बनाये रखने के लिए उत्पादन लागत में कमी करना अपरिहार्य हो गया है।
- ऐसे क्षेत्र जहां की मृदा बनावट में भारी निम्न जलनिकास, उच्च जलधारण क्षमता, निम्न निःछालन दर एवं अधिक नमी की वजह से जुताई में कठिनाई एवं ढेलों के निर्माण आदि के कारण खेत की तैयारी हेतु उपर्युक्त दशा विलम्ब से आती है। अधिकांश क्षेत्रों में ऐसी परिस्थितियां किसानों को देर से बुवाई करने को बाध्य कर देती है। गेहूं की बुवाई में 15–45 दिन तक का विलंब हो जाता है जिसमें उपज के साथ–साथ गुणवत्ता पर भी प्रभाव पड़ता है। शून्य–कर्षण आसानी से अपनायी जा सकने वाली ऐसी तकनीक है जिसकी सहायता से उत्पादन लागत में कमी के साथ–साथ गेहूं की समय से बुवाई एवं उपज में वृद्धि सुनिश्चित की जा सकती है।

जीरो टिलेज जरूरी क्यों

धान की खेती जलमग्न दशाओं में भी की जा सकती हैं परंतु गेहूं की कदापि नहीं। यही कारण है कि धान के लिए खेती की तैयारी हेतु लेव लगाना पड़ता है जबकि गेंहूं के लिए भुरभुरी मिट्टी युक्त खेत तैयार करना पड़ता है। आमतौर पर गेहूं की बुवाई हेतु खेत की तैयारी के लिए बारम्बार जुताई (5–6 बार) की जाती है। यह समस्या अधिक गंभीर हैं। विलम्ब से बुवाई के कारण अच्छी खासी लागत के बावजूद भी उपज में 25–35 कि.ग्रा./हेक्टेयर/दिन की कमी दर्ज की गयी है। खेत की तैयारी और बुवाई की परम्परागत पद्धति के विपरीत शून्य कर्षण तकनीक अपनाने से न केवल बुवाई के समय में 25–45 दिन की बचत संभव है बल्कि उत्पादकता का उच्च स्तर बरकरार रखते हुए खेत की तैयारी पर आने वाली लागत को पूर्णतः बचाया जा सकता है।

जीरो–टिल ड्रिल आमतौर पर प्रयोग में लायी जाने वाले सीड–ड्रिल जैसी ही है। अंतर सिर्फ इतना है कि सामान्य सीड–ड्रिल में लगाने वाले चौड़े फालों की जगह इसमें पतले फाल लगे होते हैं जो कि बिना जुते हुए ही खेत में कूँड बनाते हैं जिसमें गेहूं का बीज एवं उर्वरक साथ–साथ गिरता एवं ढकता रहता है। यहां तक मशीन द्वारा कटाई के पश्चात् शेष रहे धान के डंठलों युक्त खेत में भी इससे कूँड निकालकर बुवाई की जा सकती है। जीरो टिल ड्रिल को 35–45 अश्व शक्ति वाले ट्रैक्टर से आसानी से चलाया जा सकता है। 9 कतार वाली जीरो टिल ड्रिल मशीन से एक घण्टे में 0.35–0.40 हेक्टेयर खेत की बुवाई की जा सकती है।

उत्तर भारत का किसान इस सच्चाई को जानता है कि इस क्षेत्र में धान की फसल देरी से पकती है तथा देर से ही कटाई

होती है। धान के देर से पकने के कारण गेहूं की बुवाई 25 नवम्बर के बाद ही संभव हो पाती है। यहां तक की बुवाई जनवरी के प्रथम सप्ताह तक चली जाती हैं। अतः किसान का हित इसी में है कि जीरो टिलेज विधि अपनाकर गेहूं की बुवाई करें।

जीरो टिलेज तकनीक

किसानों का ऐसा विश्वास है कि धान के बाद गेहूं की फसल से अच्छी पैदावार लेने हेतु खेत की 5–6 जुताई करना आवश्यक है लेकिन वैज्ञानिकों के अनुभव बताते हैं कि अधिक जुताई से पैदावार में बढ़ोत्तरी नहीं होती बल्कि खर्चा ही अधिक होता है। अतः जीरो टिलेज विधि से गेहूं की बुवाई की जाये तो कम लागत से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इस विधि में धान की खड़ी फसल में कटाई से एक सप्ताह पहले सिंचाई कर दी जाती है। बुवाई की लागत घटने से किसान को आर्थिक लाभ अधिक होता है। उन क्षेत्रों में जहां धान की कटाई तक मिट्टी में नमी की मात्रा अत्यधिक रहे वहां नमी की उपयुक्त अवस्था आने की प्रतीक्षा करें। ज्यों ही यह अवस्था आए जीरो टिलेज विधि से गेहूं की बुवाई कर दें।

गेहूं की किन प्रजातियों को अपनाएं

जहां तक गेहूं की उपयुक्त प्रजातियों का प्रश्न है किसानों को सलाह दी जाती है कि समय से बुवाई एवं पछेती बुवाई दोनों ही स्थितियों के लिए क्षेत्रीय स्तर पर अलग–अलग अनुशंसित प्रजातियों को लगायें। गेहूं की देर से बोयी जाने वाली उन्नत किस्मों में डी.एल. 788–2, (विदिशा), एम.पी. 4010, एम.पी. 1203, एच.डी. 2834, एच.डी.2932 (पूसा 111), राज–3777, राज–3765, डब्ल्यू.आर.–544 (पूसा गोल्ड), जी. डब्ल्यू.–173, पी.बी. डब्ल्यू–373, नवीन चन्दौली (एच.आई. 1418) एवं डी.बी.डब्ल्यू–16 उपयुक्त है।

गेहूं की बुवाई से पूर्व बीजोपचार

गेहूं की बुवाई हेतु उपयोग किए जाने वाले बीज का उपचार अवश्य करें इससे दो लाभ होंगे।

- गेहूं की फसल को बीमारियों से बचाया जा सकता है।
- बीज को चिड़ियों आदि से बचाया जा सकता है– क्योंकि इस तकनीक से गेहूं की बुवाई में बीज सतह के नजदीक होते हैं अतः चिड़ियों द्वारा इन बीजों को खा जाने का खतरा बना रहता है। बीजोपचार के लिए टैबुकोंनाजोल 1 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से प्रयोग करें।

बीज दर

जीरो टिलेज विधि से गेहूं की विलम्ब से बुवाई करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि प्रति हेक्टेयर बीज की मात्रा सामान्य से 20–25 प्रतिशत अधिक रखें क्योंकि देर से बुवाई की गेहूं की फसल में कल्ले कम निकलते हैं और पैदावार कम हो जाती है। देरी से बोने की स्थिति में बीज दर 25 प्रतिशत बढ़ायें। सामान्य बीज दर से बढ़ाकर 125 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर क्षेत्र में बोनी करें।

उर्वरकों की मात्रा

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना चाहिए। मृदा परीक्षण न होने की दशा में उर्वरकों का प्रयोग निम्न प्रकार करना चाहिए।

आमतौर पर गेहूं की फसल में लगभग 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 किलोग्राम, फास्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटाश की सिफारिश की जाती है। उर्वरक की मात्रा घटाकर नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश क्रमशः 80:40:30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर रखनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा फास्फोरस एवं पोटाश की पूर्ण मात्रा जीरो सीड–ड्रिल में संलग्न उर्वरक गिराने वाले फर्टी ड्रिल द्वारा बुवाई के साथ डालना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा दो समान भागों में प्रथम एवं द्वितीय सिंचाई के समय देना श्रेयस्कर होता है।

खरपतवारों के नियंत्रण से गेहूं की पैदावार में वृद्धि

किसानों को इस सच्चाई की जानकारी होनी चाहिए कि जीरो–टिलेज एवं जीरो–टिल तकनीक के उपयोग से खरपतवार का प्रकोप काफी कम हो जाता हैं। ड्रिल द्वारा उर्वरक बुवाई के

समय गेहूं के बीज पास डालने के कारण खरपतवारों को उर्वरक से पोषण नहीं मिल पाता। धान की कटाई के उपरांत ही खेत में खड़े खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। ऐसे खरपतवारों की संख्या अधिक होने से जीरो ट्रिल–ड्रिल मशीन के चलने में रुकावट डालते हैं तथा बीज व उर्वरक मिट्टी में सही गहराई एवं स्थान पर नहीं गिर पाते। ऐसी दशा में इनके नियंत्रण हेतु पैराक्काट 0.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व का छिड़काव 600–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। फैलरिस माइनर (मंडूसी) के नियंत्रण के लिए आइसोप्रोटोयूरान नामक खरपतवारनाशी दवा को 1 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 ली. पानी में मिलाकर बुवाई के 30–35 दिन बाद प्रयोग करें। साथ में यदि चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की बहुलता हो तो 2,4–डी, 0.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से आइसोप्रोटोयूरान के साथ मिलाकर डाला जा सकता है। जहां मंडूसी के लिए आइसोप्रोटायूरान प्रभावहीन हो, उन क्षेत्रों में सल्फोसल्फयूरान 25 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 250 लीटर पानी में बुवाई के 25–30 दिन बाद छिड़काव करें। ये दवा चौड़ी एवं संकरी पत्ती वाले दोनों तरह के खरपतवार को नियंत्रित करती है।

जीरो–टिलेज विधि के प्रयोग से बोये गये गेहूं के बीज की गहराई 3–5 सें.मी. होती है एवं बीज के ऊपर हल्की मिट्टी की परत पड़ती जाती है परिणामतः बीज के जमाव एवं कल्लों का फुटाव अच्छा होता है। इस विधि में बीज का अंकुरण परम्परागत विधि की अपेक्षा दो–तीन दिन पहले ही होता है। जीरो टिलेज के प्रयोग से मंडूसी नाम खरपतवार के खतरों को काफी कम किया जा सकता हैं जिसके फलस्वरूप गेहूं की पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है। इस तकनीक को अपनाने से मिट्टी में फसल अवशेष के योगदान द्वारा कार्बनिक पदार्थ के साथ–साथ पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की वृद्धि होती है तथा भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती है। भूमि के रासायनिक तथा भौतिक गुणों पर भी इस तकनीक का लाभदायक प्रभाव पाया गया है।

जीरो टिलेज तकनीक में ध्यान रखने वाली बातें

- यदि धान की फसल की कटाई करते समय केवल 15 सें. मी. के डंठल छोड़े जायें तो मशीन द्वारा गेहूं की बुवाई करने में परेशानी का सामना नहीं करना पड़ता है।
- गेहूं की बुवाई करने से पहले जीरो–टिल मशीन का अंशशोधन ठीक कर लेना चाहिए जिससे बीज तथा खाद निर्धारित मात्रा एवं गहराई में ही पड़े।
- बुवाई करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि बीज सतह से 5–7 सें.मी. की गहराई तक डाला जायें। अगर गहराई अधिक हो गई तो जमाव कम होगा तथा गेहूं की पैदावार में कमी आ जाएंगी।
- जीरो–टिल ड्रिल मशीन में दानेदार खाद का उपयोग करना लाभदायक होता है। इससे बीज–खाद वाली नली में गतिरोध उत्पन्न नहीं होता।
- गेहूं की फसल में पहली सिंचाई बुवाई के 15–20 दिन बाद हितकर होगी। ध्यान रहे नमी की मात्रा अधिक रहने पर पहली हल्की सिंचाई यथोचित विलंब से करें।
- गेहूं की फसल की बुवाई के समय ड्रिल की नली पर विशेष ध्यान रखना चाहिए क्योंकि इसके रुकने पर बुवाई ठीक प्रकार नहीं हो पाती जिसका गेहूं की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- इस तकनीक से गेहूं की बुवाई करते समय पाटा लगाने की आवश्यकता नहीं होती।
- इस तकनीक से बुवाई के बाद कुँड़ के साथ छेड़–छाड़ करने की आवश्यकता नहीं है। निश्चित रहें गेहूं का जमाव ठीक होगा तथा पैदावार भी अच्छी प्राप्त होगी। बीज का उपचार किया गया है अतः चिड़ियों से नुकसान की संभावना भी नहीं है।
- जीरो टिलेज तकनीक अपनाने की वजह से चूंकि खेत की जुताई नहीं करनी पड़ती है। अतः जमीन की सतह समतल बनी रहने के कारण परम्परागत भूपरिष्करण (बारम्बार जुताई) की अपेक्षा सिंचाई जल शीघ्रता से ज्यादा क्षेत्र में फैल जाता है। इससे सिंचाई जल की बचत (30–40 प्रतिशत) होती है।

जीरो टिलेज तकनीक से बुवाई का आर्थिक विश्लेषण

गेहूं की बुवाई यदि 25 नवम्बर के बाद की जाए तो इसे देर से बीजाई कहा जाता है और गेहूं की पैदावार में लगभग 35 किलोग्राम प्रतिदिन प्रति हेक्टेयर की कमी होती है। ऐसी अवस्था में केवल देर से बुवाई के लिए अनुमोदित किस्में ही बोई जानी चाहिए। बीज की दर बढ़ाकर 125 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर कर देनी चाहिए और देर से बुवाई की अवस्था में गेहूं बुवाई के लिए जीरो टिलेज तकनीक का उपयोग करना चाहिए। जीरो टिलेज में धान कटने के बाद खेत की तैयारी नहीं की जाती जिससे की पारम्परिक विधि से बार–बार जुताई (ट्रैक्टर, डीजल एवं मजदूर) पर होने वाले खर्च (लगभग 2500–3000/– रुपये प्रति हेक्टेयर) की बचत की जा सकती है। इस तकनीक के प्रयोग से धान की कटाई के तुरंत बाद मिट्टी में समुचित नमी रहने पर गेहूं की बुवाई कर देने से फसल को 20 से 25 दिनों का अतिरिक्त समय मिल जाता है जिसके कारण गेहूं की पैदावार में वृद्धि होती है और खरपतवारों का कम प्रकोप होता है एवं 90 प्रतिशत तक तेल, ऊर्जा एवं समय की बचत होती है। इसके साथ यह तकनीक पर्यावरण की शुद्धता को भी बढ़ाती है।

(लेखक राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर के कृषि अभियांत्रिकी विभाग में सह–प्राध्यापक हैं)
ई–मेल : hsbhadauria@rediffmail.com

स्वास्थ्य-चर्चा

विटामिन सी से भरपूर आंवला

डॉ. सुनील कुमार खण्डेलवाल

आंवला हमारे देश के श्रेष्ठ फलों में से एक है। इसे प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिया गया एक अनमोल तोहफा कहा जा सकता है क्योंकि यह स्वाद और स्वास्थ्य दोनों ही दृष्टि से बेहद उपयोगी फल है। आंवले में रोग दूर करने की जितनी क्षमता है, उतनी किसी दूसरे फल में नहीं है। आयुर्वेद में इसे अमृत के समान गुणकारी फल तथा मां के समान लालन-पालन करने वाला और पूरे शरीर का कायाकल्प कर देने वाला माना है। भारत में वेदकाल से ही आंवलों का उपयोग औषधि के रूप में होता आ रहा है। त्रिदोषशामक यानी वात, पित्त और कफ को संतुलित रखने के कारण यह सभी रोगों में उपयोगी है। पौष्टिकता की दृष्टि से आंवले में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। संभवतः इतना विटामिन सी (एस्कॉर्बिक अम्ल) किसी अन्य फल में नहीं पाया जाता है। आंवले में लौह तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है इसी वजह से इसके सेवन से नया रक्त उत्पन्न होता रहता है। आंवले को धूप में सुखाने, उबालने तथा आंच पर रखने से विटामिन नष्ट नहीं होते हैं। आंवला एकमात्र ऐसा फल है जिसका उपयोग ताजा, सुखाकर या पकाकर किया जा सकता है; हर स्थिति में इसके विटामिन सुरक्षित रहते हैं। आंवले में रेशेदार पेक्टिन नामक कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है जो रक्त वाहिनियों के विकारों को नष्ट करने में पूरी तरह से सक्षम है।

आंवले का वानस्पतिक नाम एम्बलिका आफिसिनेलिस है। अंग्रेजी में इसे इण्डियन गूजबेरी, संस्कृत में आमलकी, धात्रीफल, अमृतफल, वयस्या और आदिफल, हिन्दी में आंवला, मराठी में काम्वट्ठा और आंवला, गुजराती में आंवलो, कन्नड़, मलयालम और तमिल में नेल्लिकाई और नेल्लि तथा तेलगू में उशीरिकई कहते हैं। यह हमारे देश के श्रेष्ठ फलों में से एक है। इसे प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिया गया एक अनमोल तोहफा कहा जा सकता है क्योंकि यह स्वाद और स्वास्थ्य दोनों ही दृष्टि से बेहद उपयोगी फल है। आंवले में रोग दूर करने की जितनी क्षमता है, उतनी किसी दूसरे फल में नहीं है। आयुर्वेद में इसे अमृत के समान गुणकारी फल तथा मां के समान लालन–पालन करने वाला और पूरे शरीर का कायाकल्प कर देने वाला माना है।

भारत में वेदकाल से ही आंवलों का उपयोग औषधि के रूप में होता आ रहा है। आयुर्वेद के अनुसार ताजा आंवला कसैला, शीतल, मधुर, हलका, रूक्ष, त्रिदोषनाशक, दस्तावर, केशों का हितकारी तथा अरूचि, दाह, प्रमेह, शोथ, विषज्वर, तृष्णा, मेद वृद्धि, मिचलाहट, अफरा, मूत्रकच्छ (बूंद–बूंद पेशाब होना), भ्रम, अम्लपित्त, कास, कफ, श्रम (थकावट), विबन्ध (कब्जी), कुष्ठादि, रक्तविकार, रक्तापित्तादि, पित्त प्रकोपजन्य व्याधि और जराव्याधिनाशक रसायन है। सूखा आंवला कुछ कडुवा, खट्टा, पाक में चरचरा, मीठा, कसैला, टूटी हुई हड्डी को जोड़ने वाला, नेत्रों और केशों के लिए हितकारी, प्रलेप द्वारा देह की कांति को बढ़ाने वाला तथा पित्त, कफ, तृषा, पसीना, मेद, विष और त्रिदोषनाशक है। सूखा आंवलाधारक, रक्तस्त्राव, उदर रोग, रक्तातिसार और अम्लपित्त में सब प्रकार से उपयोगी और श्रेष्ठ है। महर्षि सुश्रुत के अनुसार आंवला त्रिदोषनाशक है। खट्टेपन के कारण वात को, मधुरता व शीतलता के कारण पित्त को और कसैलेपन व रुखेपन के कारण कफ को शांत करने में सक्षम है। त्रिदोषशामक यानी वात, पित्त और कफ को संतुलित रखने के कारण यह सभी रोगों में उपयोगी है। आंवला विशेषकर पित्तनाशक होने के कारण यह रक्त पित्त, शीत पित्त, अम्ल पित्त आदि पित्त प्रधान रोगों की खास दवा है।

पौष्टिकता की दृष्टि से आंवले में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। संभवतः इतना विटामिन सी (एस्कॉर्बिक अम्ल) किसी अन्य फल में नहीं पाया जाता है। आंवला विटामिन सी का सर्वोत्तम वानस्पतिक स्रोत है। ताजे आंवले के रस में, नारंगी के रस की अपेक्षा 20 गुना अधिक विटामिन सी पाया जाता है। आंवले में लौह तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, इसी वजह से इसके सेवन से नया रक्त उत्पन्न होता रहता है। आंवले के फल में गैलिक अम्ल, टैनिक अम्ल, शर्करा, एल्बूमिन, सेल्यूलोज तथा खनिज लवण कैल्शियम आदि भी उचित मात्रा में पाये जाते हैं। 100 ग्राम आंवले के सेवन से 58 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

आंवले का पोषक मान (खाद्य भाग के प्रति 100 ग्राम भार में)

पोषक तत्वों की मात्रा		खनिज एवं विटामिन्स	
नमी	81.8 प्रतिशत	कैल्शियम	50 मि.ग्रा.
कार्बोहाइड्रेट	13.7 प्रतिशत	आयरन	1.2 मि.ग्रा.
प्रोटीन	0.5 प्रतिशत	केरोटिन	9 माइक्रोग्राम
वसा	0.1 प्रतिशत	थायमिन	0.03 मि.ग्रा.
खनिज लवण	0.5 प्रतिशत	राइबोफ्लेविन	0.01 मि.ग्रा
रेशे	3.4 प्रतिशत	नायसिन	0.2 मि.ग्रा.
ऊर्जा	58 किलो कैलोरी	विटामिन सी	600 मि.ग्रा.

आंवले की विशेषताएं: आंवले को धूप में सुखाने, उबालने तथा आंच पर रखने से विटामिन नष्ट नहीं होते हैं। बाकी सभी फलों और सब्जियों को गर्म करने, पकाने या सुखाने से उनके विटामिनों का अधिकांश भाग या संपूर्ण अंश नष्ट हो जाता है, परन्तु आंवला इस विषय का अपवाद है। आंवला एकमात्र ऐसा फल है जिसका उपयोग ताजा, सुखाकर या पकाकर किया जा सकता है, हर स्थिति में इसके विटामिन सुरक्षित रहते हैं। आंवले में रेशेदार पेक्टिन नामक कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है, जो रक्त वाहिनियों के विकारों को नष्ट करने में पूरी तरह से सक्षम है। किसी भी ऋतु, प्रकृति, देश, काल और उम्र के व्यक्ति के लिए आंवले पथ्य है। वृद्ध च्यवन ऋषि ने आंवलों से बनी औषधि च्यवनप्राशावलेह का उपयोग कर वृद्धावस्था में नयी शक्ति प्राप्त की थी। जिसे आज च्यवनप्राश के नाम से जाना जाता है।

आंवला शरीर की समस्त धातुओं (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि और मज्जा) के शुद्धि करण में अहम भूमिका निभाता है। आंवले के फल, फूल, छाल और जड़ सभी औषधीय गुणों

से भरपूर है। तुलसी और बेल की तरह आंवला भी पवित्र माना गया है। आंवले के फलों में कीड़े वगैरह बहुत कम लगते हैं, क्योंकि इसमें मौजूद रासायनिक पदार्थों की संरचना ही कुछ विशेष प्रकार की होती है। आंवले की लकड़ी पानी में जल्दी नहीं घिसती है। इसलिए इसका उपयोग कुएं की चौखट बनाने में किया जाता है। आंवले के फल, तना तथा टहनियों की छाल और पत्तियों में टैनिन प्रचुरता में पाया जाता है। इसीलिए आंवले के फल और टहनियों की छाल का उपयोग स्याही, रंग (चमड़ा रंगने का रंग) तथा बाल धोने के मसाले बनाने में किया जाता है।

आंवले के विविध उपयोगः आंवला बाजार में नवम्बर से मार्च माह के अन्त तक मिलता है, लेकिन जनवरी–फरवरी महीने के आंवले से बना मुरब्बा, अचार, चटनी तथा जैम आदि काफी उम्दा और स्वादिष्ट होता है, क्योंकि उस समय तक आंवले अच्छी तरह से पक जाते है। मुरब्बा, अचार, जैम तथा च्यवनप्राश आदि बनाते समय इस बात का ध्यान रखें कि दाग पड़े आंवलों का उपयोग ना करें, क्योंकि दाग पड़े आंवले ऐसी चीजें बनाने के लिए ठीक नहीं होते हैं। आंवलों का उपयोग करने से पूर्व साफ पानी से धो लेना चाहिए।

आंवले का मुरब्बाः आंवलों का सेवन इससे मुरब्बा बनाकर भी किया जा सकता है। वैसे तो आंवले का मुरब्बा बना बनाया बाजार में तैयार मिलता है लेकिन घर पर बनाया जाए तो वो शुद्ध और उत्तम गुणवत्ता वाला होता है। घर पर आंवले का मुरब्बा बनाने के लिए बिना दाग वाले बड़े–बड़े आंवलों को साफ पानी से अच्छी तरह धोकर, इन आंवलों को स्टेनलेस स्टील की पतली कील से चारों तरफ से अच्छी तरह से गोद लें। आंवले को कभी भी लोहे की कील से नहीं गोदना चाहिए अन्यथा आंवले काले पड़ जाएंगे और उनकी गुणवत्ता कम हो जाएगी। 24 घण्टे के लिए इन आंवलों को चूने के निथरे पानी में डुबोकर छोड़ दें। आंवलों को चूने के निथरे पानी में छोड़ देने से आंवले का कसैलापन दूर हो जाता है और मुरब्बा स्वादिष्ट बनता है। दूसरे दिन आंवलों को चूने के निथरे पानी से निकालकर, साफ पानी में डालकर, हल्का मुलायम होने तक उबाल लें। फिर आंवलों को पानी से बाहर निकालकर, 12 घण्टे के लिए छाया में सूखने के लिए डाल दें। अंत में आंवलों को तीन तार चाशनी में डुबोकर, बर्नी में भरकर रख दें। इस तरह से तैयार किया गया आंवले का मुरब्बा दो–तीन साल तक खराब नहीं होता है।

आंवले का चूर्णः आंवलों को अच्छी तरह साफ पानी से धोकर 20 से 25 दिनों के लिए धूप में छोड़ दें। ऐसा करने से आंवला बिल्कुल सूखकर फट जाएगा और उसके बीज अपने आप अलग होने लगेंगे। इसके बाद सूखे हुए आंवलों को बीजों से अलग करके कूट लें। इस प्रकार तैयार आंवला चूर्ण को साफ एवं सूखी बोतल में बंद करके रख लें। आंवले का यह चूर्ण 1 साल तक खराब नहीं होता है।

आंवले का रसः आंवले में मौजूद उपयोगी तत्वों का अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए उसके रस का सेवन करना चाहिए। रस निकालने के लिए स्टेनलेस स्टील के चाकू से आंवले के बारीक टुकड़े कर, उसके भीतर की गुठली को निकाल लें। फिर उन बारीक कटे हुए टुकड़ों को ज्यूसर में डालकर रस निकाल लें। आंवले को स्टेनलेस स्टील के कद्दूकश पर बारीक कसने के बाद उसे कपड़े की सहायता से निचोड़कर भी रस निकाल सकते हैं।

औषधीय गुणः मनुष्य को होने वाला संभवतः कोई रोग ऐसा नहीं है, जिसमें आंवले का सेवन नहीं किया जा सके। आंवले में सभी रोगों को दूर करने की अद्भुत क्षमता होती है। आंवले का सबसे बड़ा गुण शरीर को रोगों से मुक्त रखकर शारीरिक शक्ति स्थिर रखना है। आंवले में पाए जाने वाले औषधीय गुणों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

स्कर्वी रोगः विटामिन सी की कमी से स्कर्वी नामक रोग हो जाता है जिससे शरीर में कमजोरी, मसूड़ों से खून आना तथा हड्डियां विकृत हो जाती है। शरीर की हड्डियां स्वतः ही टूटने लगती है। शरीर में कमजोरी महसूस होती है और स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। आंवले के नियमित सेवन करने से स्कर्वी रोग से मुक्ति मिल जाती है, क्योंकि आंवले में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

पीलियाः गुड़ के साथ आंवले के चूर्ण का सेवन करने से पीलिया के निवारण में काफी मदद मिलती है। दिन भर में तीन बार चार–चार ग्राम आंवले का चूर्ण पानी के साथ सेवन से लीवर के सारे रोग दूर हो जाते है।

भ्रम रोगः आंवले का हरा ताजा फल खाने से मुख स्वादिष्ट हो जाता है। आंवले का ताजा फल खाकर जल पीने से जल मीठा लगता है, प्यास बुझती है और भ्रम रोग दूर होता है।

रक्त शुद्धताः आंवला अपने शीतवीर्य के प्रभाव से रक्त की उष्णता और तीक्ष्णता को दूर करता है तथा अपने शोधन गुण से रक्त के भीतर आये हुए विष, मल आदि को दूर कर रक्त को शुद्ध करता है।

आधा शीशीः केसर, नीलकमल व गुलाब जल के साथ आंवले को अच्छी तरह पीसकर किया गया लेप सिरदर्द या आधा शीशी के लिए लाभकारी होता है।

खुजलीः खुजली हो जाने पर आंवले की गुठली को जलाकर भस्म बना लें और उसमें नारियल का तेल मिलाकर खुजली वाले स्थान पर लगाने से फायदा होता है।

केश कल्पः 30 ग्राम आंवला, 10 ग्राम बहेड़ा, 50 ग्राम आम की गुठली और 10 ग्राम लौह चूर्ण को कढ़ाई में रात को भिगोकर रख दें। इसका नियमित बालों पर लेप करने से छोटी आयु में श्वेत हुए बाल कुछ ही दिनों में काले पड़ जाते है। आंवला और आम की गुठली दोनों को बराबर मात्रा में लेकर, जल में पीसकर, सिर पर लेप करते रहने से बाल काले, मुलायम, चमकीले और बड़े होते है। आंवले का तेल सिर में लगाने से दिमाग को ठंडक मिलती है तथा बाल काले, घने और मुलायम हो जाते हैं।

मुंह के छालेः आंवले की पत्ती को जल में उबालकर कुल्ला करने से मुंह के छाले नष्ट हो जाते हैं।

रक्तस्त्रावः बवासीर के मस्सों से अधिक रक्तस्त्राव होता हो तो आंवला चूर्ण का सेवन दही की मलाई के साथ करने से फायदा होता है। रक्तातिसार में अधिक रक्तस्त्राव हो तो आंवले के रस में शहद और घी मिलाकर पीने और ऊपर से 100 मि.ली. बकरी का दूध दिन में तीन बार पीने से फायदा होता है। चाकू आदि से शरीर का कोई स्थान कट जाये और विशेष रक्तस्त्राव हो तो तत्काल आंवले का ताजा रस निकालकर लगा देने से लाभ होता है।

हृदय विकारः आंवले का मुरब्बा चांदी के वर्क में लपेटकर खाने से हृदय को बल मिलता है और हृदय के सभी विकार दूर हो जाते हैं और स्वास्थ्य भी अच्छा बना रहता है।

स्मरणशक्तिः नित्य प्रति प्रातः आंवले का मुरब्बा खाने से स्मरणशक्ति तेज हो जाती है।

चक्कर आनाः आंवले की तासीर ठंडी होती है। इसलिए जिन्हें शारीरिक गर्मी के चलते चक्कर आते हों और जी घबराता हो, उन्हें रोज आंवले के मुरब्बे का सेवन करना चाहिए।

दंतविकारः जिन बच्चों के दांत ठीक से न निकले हों, कमजोर हों, मंगूर हों और दांतों को कीड़े लग गए हों, उन्हें रोज ताजे आंवले खाने को देना चाहिए। ताजे आंवले को दांत से काटकर खाने या काटकर दांत पर मलने से दंतविकार दूर हो जाते हैं।

पेशाब की जलनः पेशाब में जलन या रुकावट होने पर आंवलों और गन्ने का तुरन्त निकाला हुआ रस सम भाग मिलाकर पीने से या 50 ग्राम ताजा आंवले के रस में 25 ग्राम शक्कर या शहद मिलाकर कुछ दिनों तक नियमित सेवन करने से पेशाब की जलन या रुकावट दूर होती है और पेशाब खुलकर आता है। बूंद–बूंद पेशाब (मूत्रकच्छ) आना बंद हो जाता है।

बहुमूत्रः आंवले की गुठली के अंदर बीज होते है। उन बीजों के चूर्ण को शहद के साथ चाटने से बहुमूत्र में लाभ होता है।

अम्लपित्तः तीन–तीन ग्राम आंवले का चूर्ण रोज 15 दिनों तक दिन भर में तीन बार सेवन करने से पेट की जलन तथा अम्ल बढ़ जाने के कारण होने वाली दूसरी तकलीफें ठीक हो जाती है। अम्लपित्त के रोगियों के लिए आंवले का चूर्ण बहुत लाभकारी होता है।

पथरीः आंवले का चूर्ण मूली के साथ खाने से मूत्राशय की पथरी में लाभ होता है।

खांसीः एक चम्मच आंवले के चूर्ण को एक चम्मच

शहद में मिलाकर सुबह–शाम चाटने से खांसी में आराम मिलता है।

सूखी खांसी: बार–बार और लगातार खांसने पर भी कफ नहीं निकलता हो तो, इसे सूखी खांसी कहते है। एक गिलास दूध में 10 ग्राम आंवला चूर्ण डालकर उबाल लें। एक बार सुबह खाली पेट और एक बार रात को सोते समय, दूध को थोड़ा ठंडा करके पीने से सूखी खांसी का चलना बंद हो जाता है।

पाचन शक्ति: रात को सोते समय एक चम्मच आंवले का चूर्ण पानी या दूध के साथ लेने से सुबह शौच साफ आता है, आंते और पेट साफ होता है, कब्ज की शिकायत दूर हो जाती है और पाचन शक्ति बढ़ती है।

खट्टी डकारें: खट्टी डकारें पेट की खराबी के कारण आती हैं। यदि खट्टी डकारें आती हों तो नारियल के पानी के साथ आंवले के चूर्ण का सेवन करने से बहुत लाभ होता है।

दस्त: समान मात्रा में आंवले का चूर्ण और पीसा हुआ काला नमक एक चम्मच की मात्रा में पानी के साथ लेने से दस्त तुरन्त बंद हो जाते है।

नेत्र रोग: ताजे आंवले का रस प्रतिदिन शहद के साथ सेवन करने से आंखों की ज्योति बढ़ती है तथा मोतियाबिंद आदि नेत्र रोगों में काफी लाभ होता है।

मधुमेह: मधुमेह के रोगियों के लिए ताजे आंवले को काटकर उसका रस चूसना बहुत लाभप्रद है, क्योंकि आंवले का रस खून में शर्करा को बढ़ने से रोकता है। ताजे आंवले के रस में शहद मिलाकर पीने से भी मधुमेह में लाभ होता है।

पेट के कीड़े: 50 मिली लीटर ताजे आंवले का रस नियमित पांच दिनों तक पीने से पेट के कीड़े नष्ट हो जाते है।

पाण्डुरोग (एनीमिया): रक्त में हिमोग्लोबिन की कमी होने को पाण्डुरोग कहते है। ताजे आंवले के 50 मिलीलीटर रस में दो चम्मच शहद मिलाकर रोज दो–तीन सप्ताह तक पीने से खून की कमी (एनीमिया) की शिकायत से छुटकारा मिल जाता है।

नकसीर: नकसीर (नाक से खून गिरना) आने पर आंवले का रस 2–2 चम्मच 2–2 घण्टे से पीने से नाक से खून गिरना बंद हो जाता है।

सिर दर्द: शरीर में गर्मी बढ़ने से होने वाले सिर दर्द में, आंवले के चूर्ण में घी शक्कर मिलाकर 2–2 चम्मच सुबह–शाम सेवन करने से सिर दर्द बंद हो जाता है।

तुतलाना (हकलाना): जो बच्चे या बड़े तुतलाकर या हकलाकर बोलते हैं, उन्हें आंवलें के मौसम में रोज ताजा आंवला चबाना चाहिए। ऐसा करने से कुछ ही दिनों में जुबान (जीभ) पतली हो जाने से आवाज भी साफ हो जाती है।

स्वर भंग: ज्यादा बोलने, चिल्लाने या देर तक गाने आदि से कोई संक्रमण या पित्त प्रकोप के कारण गला बैठ जाता है। आंवले का चूर्ण 1–1 चम्मच सुबह–शाम दूध के साथ लेने से गला ठीक हो जाता है।

मुखशेष: मुंह सूखना और तेज प्यास लगना, इस स्थिति को मुखशेष कहते हैं। आंवले के चूर्ण को मुनक्का के साथ पीसकर चटनी बनाकर चाटने या गोली बनाकर मुंह में रखकर चूसने से मुखशेष दूर होता है और अरुचि दूर होती है।

विशिष्ट योग (त्रिफला चूर्ण): हरीतकी (हर्र), बहेड़ा एवं आंवले को समभाग में मिलाने पर त्रिफला चूर्ण बनता है। त्रिफला आयुर्वेद की एक सुपरिचित औषधि है। त्रिफला कफ और पित्त का नाश करता है। प्रमेह तथा कुष्ठ को मिटाता है। मल उतारता है। नेत्र के लिए हितकारी है। अग्नि को प्रदीप्त करता है। रूचि उत्पन्न करता है और विषम ज्वर का नाश करता है।

(लेखक राजस्थान कृषि महाविद्यालय के आणविक जीव विज्ञान एवं जैव प्रौद्योगिकी विभाग में वरिष्ठ तकनीकी सहायक हैं।)

ई–मेल : khandelwal19@yahoo.com

सफलता की कहानी

जल संरक्षण की अलख जगाती एक ग्रामीण महिला

रजनी मिश्रा

रेगिस्तान जहां जल को तरसती मरूक्षेत्र की जमीन पर पानी अमृत तुल्य माना जाता है, आम गृहिणी-सी लगने वाली विमला कौशिक ने पानी की बूंद-बूंद बचाकर जन-जन में जल के संरक्षण की अलख जगाने का असाधारण एवं अनुकरणीय काम किया है। बीकानेर जिले के पचास से अधिक तालाबों की पुनः खुदाई कराकर उन्हें संरक्षित करने पर जहां ग्रामीण क्षेत्रों में आम जन को पीने के लिए पानी मुहैया हुआ, वही पशु धन को भी पानी की किल्लत से मुक्ति मिली है। उनके जल संरक्षण के प्रति समर्पित भाव के चलते ग्रामीण जन उन्हें पानी वाली बहिनजी के नाम से ही जानने-पहचानंने लगे हैं।

बीकानेर संभाग के जिले हनुमानगढ़ टाउन में जन्मी विमला पानी से अपने इस जुड़ाव की बात पूछने पर बताती हैं कि "इसके पीछे एक कहानी है। सूरतगढ़ (गंगानगर) के पास मेरे परिवार की खेतीबाड़ी थी। वहां सेम की समस्या के चलते खेतीबाड़ी की जमीन नष्ट हो गई। इससे निपटने के लिए ग्रामीणों को इकट्ठा कर उनसे चर्चा की तथा जिला कलेक्टर को ले जाकर सेम से उपजाऊ जमीन नष्ट हो जाने की स्थिति का मौका मुआवना कराया। यह पहला प्रयास था। इस प्रयास के चलते सेम का पानी जमीन से निकालने के लिए जिला कलेक्टर के माध्यम से एक प्रोजेक्ट बना जिससे उस क्षेत्र में उपजाऊ जमीन को सेम से नष्ट होने से बचाया जा सका। पानी को लेकर यह मेरी पहली लड़ाई थी, जो सफल रही।"

साठ वर्षीय विमला ने जिले के कुएं, बावड़ी, कुंड और टांके आदि के संरक्षण एवं जलचेतना अभियान को सफल बनाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में बैठक, कार्यशालाएं और पदयात्राएं की। बीकानेर और उसके आसपास के करीब पचास से अधिक तालाबों की पुनः खुदाई कराकर जीर्णोद्धार का सराहनीय कार्य किया। बीकानेर क्षेत्र के गांव सुरधना की ददोलाई तालाब, गोगातलाई, जोगला में सादेलाई, जांगलू में मादोलाई, नोखडा में बडापार, टोंकला में विजय श्री खारिया पतावतान में मेघोलाई, बीकानोक में रामदास तालाई, झिंझिया तालाब, मोटावतान गांव में रामू दादा तलाई, किलचू, कल्याणसर, लालमदेसर, लाखासर, राणासर, पाबूसर, सुरजड़ा आदि गांवों में कुंड, टांके तथा पुराने तालाबों की पुनः खुदाई करवाने के कारण आज पानी के संरक्षण एवं संग्रहण के लिए ग्रामीणों को उपलब्ध हो सके हैं।

महिला हस्तशिल्प समिति के गठन एवं कार्य के संबंध में विमला ने बताया कि "विवाह के बाद में वो हनुमानगढ़ से बीकानेर आ गई। यहां भी पानी की उन दिनों काफी किल्लत थी। लेकिन उस समय मैं नेहरू युवा केन्द्र से जुड़ गई जहां दरी, खेस आदि बनाने की प्रेरणा मिली। घर पर ही इसके लिए एक सेंटर खोल कर काम शुरू कर दिया। बीकानेर के तत्कालीन जिला कलेक्टर एस.के. खन्ना तथा विधायिका कान्ता खतूरिया ने काम की सराहना की और प्रोत्साहन दिया। बस उनके दिशा–निर्देश पर महिला हस्तशिल्प समिति का पंजीयन कराकर हस्तशिल्प एवं समाज के कार्य करने लगी। यह वर्ष 1985 की बात है। इस समिति ने पचास प्रशिक्षण केन्द्र चलाए। इनमें से चालीस प्रशिक्षण केन्द्र ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत थे। बाद में इनकी संख्या नब्बे तक हो गई। इन केन्द्रों पर सिलाई–बुनाई, हैंडीक्राफ्ट, पापड़–बड़ी, बैग आदि बनाने का प्रशिक्षण महिलाओं को दिया जाता था। वर्तमान में समिति केवल पांच केन्द्र ही चला रही है। समिति में 18 का स्टाफ है तथा 17 कर्मचारी सफाई कार्य हेतु अलग से कार्यरत हैं। नगर निगम बीकानेर के सहयोग से स्वच्छता मित्र योजना विगत पांच वर्षों से तीन वार्डों में यह संस्था चला रही है। 6500 घरों के सामने सफाई कार्य किया जा रहा है। इस योजना में सफाई के प्रति घर का आर्थिक सहयोग नगर निगम द्वारा दिया जाता है। जनजागृति के अभाव में बीस रुपये प्रति घर का संग्रह पूरी तरह नहीं हो पा रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वयंसहायता समूह हमारी समिति द्वारा चलाए जा रहे हैं। वर्तमान में एक सौ स्वयंसहायता समूह क्रियाशील हैं। एक समूह में बीस महिलाएं होती हैं जो बीस रुपये प्रतिमाह इकठ्ठा करती हैं। फिर इस इकठ्ठी की गई राशि से समूह की महिला ऋण ले लेती है। सामान्यतः खेत में बिजाई के समय यह ऋण लिया जाता है जो फसल के बिकने पर जमा करा दिया जाता है। जहां बैंक नहीं है उन ग्रामीण क्षेत्रों में संस्थान ने किसानों को ऋण दिलाने का काम भी किया है।"

जल बिरादरी के अध्यक्ष राजेन्द्र सिंह से संपर्क के बारे में पूछने पर वह कहती हैं कि "मुझे जब उनके काम की जानकारी मिली तो उन्हें पत्र लिखा और जल संरक्षण की दिशा में काम करने की अपनी इच्छा उन्हें बताई। उन्हीं दिनों जयपुर के निम्मी गांव में तरूण भारत संघ के द्वारा प्रथम राष्ट्रीय जल बिरादरी सम्मेलन का आयोजन होने वाला था तो राजेन्द्र जी ने मुझे इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए साथियों सहित आमंत्रित किया। मैं भाग लेने के लिए साथियों को लेकर वहां गई। इसी सम्मेलन में मुझे बीकानेर जल बिरादरी की अध्यक्ष चुना गया। तरूण भारत संघ के प्रयासों से निम्मी में न केवल तालाब बना बल्कि गुजरात से खेती की तकनीकी टीम बुलाकर प्रशिक्षण भी ग्रामीण जनों को दिया गया।"

जल बिरादरी के सम्मेलन से लौटने के बाद किए गए कार्यों के बारे में विमला बताती हैं कि "पहले गांवों में जाकर चौपालों में चर्चा की, फिर बीकानेर की विभिन्न तहसीलों में सूखाग्रस्त क्षेत्र को चिन्हित करने के लिए सर्वे किया। पानी की सबसे गंभीर समस्या नोखा तहसील के जेगला एवं जांगलू गांवों में नजर आई। मैंने गांव के पुराने जोहड़ों (तालाबों) में जमा मिट्टी की खुदाई कर उन जलभराव को पूर्ववत् करने का निर्णय लिया। इसमें गांव के लोगों ने श्रमदान करना स्वीकार कर लिया। आर्थिक सहायता तरूण भारत संघ, कपार्ट एवं जन सहयोग से मिल गई। जब एक तालाब की कायापलट हो गई तो लोगों को भी बात समझ में आ गई और ग्रामीण जन स्वतः ही सहयोग के लिए जुड़ते गए। नोखा में पहला सम्मेलन जल बिरादरी का किया। राजेन्द्र जी इस सम्मेलन में आए। नोखा तहसील के डेढ़

हजार से अधिक लोगों ने इस सम्मेलन में भाग लिया। जांगलू में 33 प्रतिशत ग्रामीण सहयोग से तालाब की खुदाई कराई।"

बीकानेर की कोलायत तहसील क्षेत्र में पांच सौ टांकों का निर्माण तथा दस से अधिक तालाबों का पुनरूद्धार कराने वाली विमला देवी मात्र आठवीं तक ही पढ़ पाई थी परन्तु यह पढ़ाई उनके लिए कभी बाधक नहीं बनी। वह बताती हैं कि "कोलायत तहसील के नोखड़ा गांव में रमोलाई पुराने तालाब को साफ करा, इस क्षेत्र में पानी पदयात्राएं की जिससे तहसील के अनेक गांववालों ने पानी व तालाब के महत्व को जाना। मोटावता से नोखडा तक की पदयात्रा में 400 लोगों ने भाग लिया। यहां पांच तालाबों को खुदवाया। ये काम दो माह तक चला। तीन लाख रुपये व्यय हुए। इनमें से 33 प्रतिशत राशि जन सहयोग से मिली और शेष राशि तरूण भारत संघ के आर्थिक सहयोग से ली। जांगलू से जेगला, रायसर से देशनोक तथा मोटावता से नोखडा तक तीन पानी पदयात्राएं की। रामसर से देशनोक वाली पानी पदयात्रा में राजेन्द्र साथ में थे। इस यात्रा में ग्रामीण क्षेत्र में जनजागृति के लिए राजीव गांधी फाउंडेशन ने पांच लाख का सहयोग भी दिया था।"

जल संरक्षण के क्षेत्र में विमला देवी से उनकी भावी योजनाओं के बारे में पूछने पर वह एक बार गंभीर हो जाती हैं। फिर एक लंबी सांस छोड़कर कहती हैं कि "जल संरक्षण तथा तालाबों के पुनरूद्धार की योजनाएं तो ढेरों हैं। बीकानेर जिले में 500 तालाब हैं। इन सभी की स्थिति शोचनीय है। पुराने तालाबों का उद्धार तो योजना का प्रमुख लक्ष्य है ही, लेकिन मुख्य समस्या यह है कि वर्षा जल भी बिना रुके तालाब तक पूरा कैसे पहुंचे? सभी जगह कब्जे हो जाने से तालाब का आगोर क्षेत्र समाप्त–सा होता जा रहा है। जबकि आज वर्षा जल के अधिक से अधिक संग्रहण की जरूरत है। सरकारी स्तर पर इस ओर गंभीरता से अभी ध्यान नहीं दिया जा रहा है।"

विमला कौशिक को स्व. श्री देवी छाजेड स्मृति संस्थान द्वारा वर्ष 2007 में मातृ वंदना प्रतिभा सम्मान तथा रामकृष्ण जयदयाल डालमिया सेवा संस्थान द्वारा वर्ष 2008 के द्वितीय पानी पर्यावरण पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, भारत सरकार के आर्थिक सहयोग के द्वारा जल संरक्षण एवं संवर्द्धन के प्रति जन जागृति हेतु बनाई जा रही फिल्म "आखिर कब" में भी विमला के कार्य को विस्तार से दिखाया गया है।

जल संरक्षण की अलख जगाती विमला कौशिक अभी भी रुकी नहीं हैं। उनका जन–जागरण, पदयात्राएं बराबर जारी हैं। जहां भी जब भी जरूरत पड़ती है– पानी वाली बहिन जी को गांव वाले याद करना नहीं भूलते। वह कहती हैं कि अभी तो काम हुआ नहीं है। अभी तो ये शुरुआत है। काम तो जनजागृति आने के बाद खुद ब खुद होगा। लोग अपनी जमीन–अपना पानी के लिए अब जाग रहे हैं।"

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

हमारे आगामी अंक

मार्च, 2010 – कृषि और जलवायु परिवर्तन

अप्रैल, 2010 – बजट 2010–11

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, कृषि, रोजगार व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे। उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं। पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से तीस दिन पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री कम से कम 45 दिन पूर्व हमें मिल जानी चाहिए ।

तेरह भारतीय भाषाओं में हमारी पुस्तकें

क्षेत्रीय सुगंध से महकता गुलदस्ता

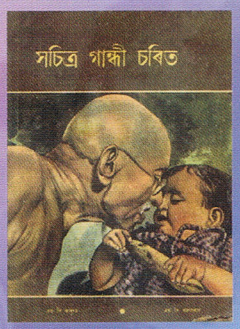

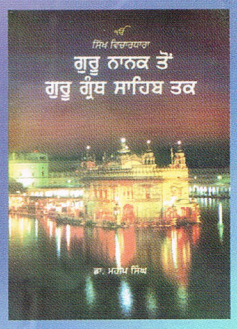

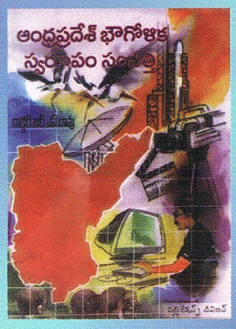

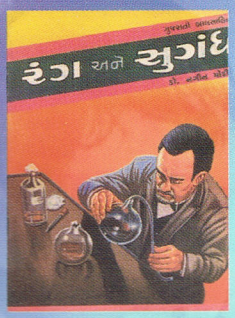

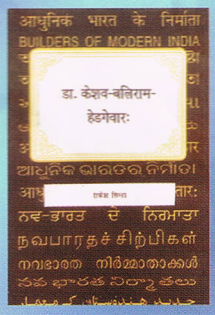

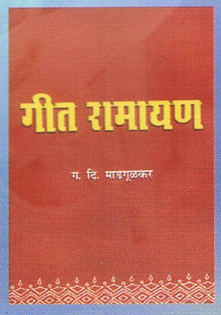

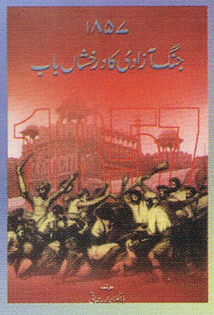

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली

विक्रय केंद्रः सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, **नई दिल्ली**–110 003. हाल नं0 196, पुराना सचिवालय, **दिल्ली**–110 054. सी–701, केंद्रीय सदन, बेलापुर, **नवी मुंबई**–400 614. 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, **कोलकाता**–700 069. राजाजी भवन, एफ एंड जी ब्लॉक, 'ए' विंग बेसेंट नगर, **चेन्नई**–600 090. बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, **पटना**–800 004. प्रेस रोड, निकट गवर्मेंट प्रेस **तिरुअनंतपुरम**–695 001. हाल नं.1, दूसरी मंजिल, केंद्रीय भवन, सेक्टर–एच, अलीगंज, **लखनउ**–226 024. ब्लॉक नं. 4, गृहकल्प कॉम्प्लेक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, **हैदराबाद**–500 001. प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, **बंगलौर**–560 034. अम्बिका कॉम्प्लेक्स, प्रथम तल, पालदी, **अहमदाबाद**–380 007. हाउस नं. 07, न्यू कालोनी, चेनीकुथी, के.के.बी. रोड, **गुवाहाटी**–781 003.

ज्यादा जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट देखें – www.publicationsdivision.nic.in
e-mail:dpd@sb.nic.in, dpd@hub.nic.in

आर. एन./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2009–11
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–55/2009–11

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2009-11
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2009-11
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना